श्री अन्तगड्दशा सूत्र

(हिन्दी काव्य में)



ज्ञान बिना करनी वृथा, बिन भाषा नहीं ज्ञान।
मर्म धर्म का गर लखे, स्वयं हो श्रद्धावान।
इसीलिये सत शास्त्र को, लो हिन्दी में जान।
पढो लिखो करनी करो, हो निश्चय कल्यान।

प्रकाशक —

चन्द्रकुमार जैन

सम्पादक व प्रकाशक

जैन ज्योति, अजमेर

प्रकाशक—
चन्द्रकुमार जैन
'सम्पादक'
जैन ज्योति अजमेर



द्वितीयावृत्ति
दो हजार

पर्युषण पर्व
२०२४

भाग
४२ वां

प्राप्ति स्थान—
जैन ज्योति कार्यालय
नया बाजार, अजमेर (राज०)



मुद्रक —
चोपड़ा प्रिन्टिंग प्रेस,
नया बाजार, अजमेर

श्री अंतगड़दशा सूत्र

हिन्दी काव्य में क्यों ?

प्रिय पाठकगण !

जब तक किसी भी शास्त्र, ग्रन्थ एवं साहित्य को हम अपनी भाषा मे नही जान लेते तब तक केवल अंध श्रद्धा और रुढी के आधार पर भले ही उनका पाठ किया जाय पर बिना उसके मर्म को समझे हम उसकी वास्तविकता से दूर ही रहेगे। अत: इन आगमो को अब हिन्दी साहित्य मे लाकर साधारण से साधारण मनुष्य को भी लाभ उठाने का अवसर दिया जाय, यह परम आवश्यक हो गया है।

श्री भक्तामर कल्याणमन्दिर, पुच्छिस्सुणं व अनेक स्तोत्रो का हिन्दी काव्य मे अनुवाद करने पर समाज ने उसे जिस आदर भाव से अपनाया है एवं अब तक हजारो प्रति मे छप जाने पर जिनकी निरन्तर माग आ रही है, यही हमारी इस दूरदर्शिता का जीता जागता प्रमाण व इसकी उपयोगिता का सही नमूना है

श्री गुलाब चोवीसी मे २५ बोल के थोकडो की काव्य मे रचना करके जो एक नया मोड लिया है वह भी आशा से अधिक सफल बना एवं आज भी उसकी सर्वत्र माग है।

समाज की इस आदर भावना को ही ध्यान में रख कर श्री अन्तगडदशा सूत्र की हिन्दी काव्य मे रचना करने का साहस किया है, हमे आशा है,हमारे पाठक वृन्द इसकी उपयोगीता को लक्ष्य मे रख कर ही इसका पठन पाठन करगे एव हमारी त्रुटियो के लिये हमे मार्ग-दर्शन कराके भविष्य के लिये चेतना प्रदान कर हमारे सहायक बनेगे।

अनेक कठिन परिस्थितियो के कारण इसका प्रकाशन भी देरी से हुआ, जल्दि में हुआ एव प्रूफ सशोधन व सम्पादन में भी प्रमाद रह गया है इन सारी त्रुटियो के साथ आपके कर-कमलों मे 'फूल सारू पाकडी' रखते हुए आशा है आप अपनायेंगे, साहस देंगे ताकि आगामी रचनाओं के लिए हमारा प्रयास जागृत रहे एव हम अबकी बार अधिक से अधिक सतर्कता के साथ अपनी सेवायें सही रूप मे दे सकें।

इस अतगडदशा सूत्र का वाचन पर्युषण पर्व के आठ दिनो मे निश्चित रूप मे होता ही है। अत आप स्वय भी कर सकेंगे, विराजित सन्तो से सुन सकेंगे तथा जिस ग्राम, नगर में सन्तो के चातुर्मास नही हो तो वहा की जनता भी बडी सरलता के साथ इसका वाचन करके धर्म लाभ ले सकेगी, इसी आशा और सद्प्रेरणा के साथ——

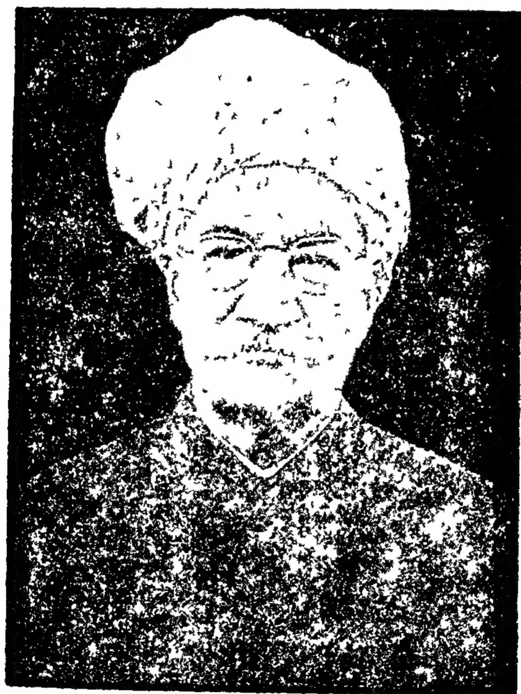
जैन ज्योति



जैन ज्योति के सह-संस्थापक —

जैन जगत के चमकते सितारे

समाजभूषण धर्मप्रेमी, उदारहृदय



दानवीर सेठ स्वरूपचंदजी सा० तालेरा, ब्यावर

जैनरत्न, समाजभूषण, धर्मपरायण, उदारहृदय,

धर्मवीर सेठ स्वरुपचन्दजी सा. तालेरा, ब्यावर

का

संक्षिप्त-परिचय

ब्यावर के प्रमुख एवं सुप्रसिद्ध श्रीमन्त सेठ स्वरुपचन्दजी तालेरा से जिसने एक बार भी भेट की, वह अपने जीवन में कभी नही भूल सकता, यही सेठ सा० के अटूट प्रेम, स्वागत सत्कार व वात्सल्य भावना की अपनी निजी विशेषता है।

आपका जन्म स० १९४८ मे भवरी (मारवाड) में हुआ, अपने पिता श्री कुनणमलजी की छत्र छाया मे बाल्यकाल सुख पूर्वक व्यतीत कर आप स० १९५६ मे ब्यावर पधारे एवं यहीं विद्याध्ययन प्रारम्भ किया। शिक्षा की ओर विशेष रुचि न होने के कारण आपने कुछ वर्ष बाद ही नौकरी करली और व्यापारिक क्षेत्र की विशेष जानकारी करने मे दिलचस्पी रखी। सन् १९१८ मे आपने ऊन का व्यापार शुरु किया। भाग्य ने आपका साथ दिया, लक्ष्मी ने अपको वरद हाथो से वरा और इस प्रकार आपने आशातीत सफलता प्राप्त की। बम्बई से आपने बडे पैमाने पर ऊन का कारोबार बढाया और भारत ही नही विलायतो मे भी अपनी प्रमाणिकता और कार्य कुशलता की छाप जमाई। इस प्रकार लाखो की सम्पत्ति का उपार्जन कर आप पूर्ण वैभवशाली बने।

स्वर्गीय जैन दिवाकर गुरु चौथमलजी म० सा० के आप परम भक्त है। गुरुदेव के प्रति आपकी प्रगाढ श्रद्धा एवं अटूट स्नेह था धर्म गुरु के प्रति अपनी सच्ची श्रद्धा का परिचय, आपने धार्मिक व सामाजिक क्षेत्र मे विशाल हृदय से लक्ष्मी का सदुपयोग कर सस्थाओ को ऊंचा उठाने एवं धार्मिक प्रचार करने मे पूर्ण सहयोग दिया जो युग २ तक सदैव चिरस्मरणीय रहेगा।

सेठ स्वरूपचन्दजी तालेरा

सेवा भावी श्रीमंत हैं और हृदय के बड़े उदार,
ठस ठस कर जिनके जीवन में भरे हुए हैं धर्म विचार।
स्वाभिमान सदा ही रखा, झुके नहीं विपदाओं में,
वरद् किया लक्ष्मी ने अबके खेल रहे सम्पदाओं में,
रूचि जिनागम में जिनकी अति, खूब ही कर रहे धर्म प्रचार,
पनप रही है जिनके योग से कई सस्थाये इस वार।
चंदा सम निर्मल मन जिनका रखते सदा सत्य व्यवहार,
दया दान जनहित सेवा में, तन मन धन करते न्योछावर।
जीवन बड़ा सादगी मय है, नहीं किसी से खार किया।
तात मात और अपने कुल का जिनने गौरव बढ़ा दिया।
लेवें खूब ही लावा धर्म का, यही भावना रखते हम,
रात दिवस हीबढे तुम्हारी, "जीत" यशो किर्ती हरदम॥

"जैन ज्योति"



श्री अंतगढ़ दशा सूत्र

(हिन्दी काव्य मे)

दोहा—

शासनपति श्री वीर जिन, प्रणमूं बार हजार ।
चौथे आरे अवतरे, अवसर्पिणी मझार ॥



तर्ज–राधेश्याम

श्री महावीर के समय मे एक, चम्पानगरी सुखकारी थी,
औपपातिक सूत्र मे बतलाया, वो देवो की प्यारी थी ।
उस नगरी के ईशान कोण मे, यक्षायतन एक अति प्रिय था,
पूर्ण भद्र था नाम जहा, वनखण्ड भी सुन्दर रमणीय था ॥
जहा कोणिक राजा राज्य करे, जो प्रभावशाली महेन्द्र था
मेरु समान था शक्तिमान, जन २ का प्रिय नरेन्द्र था ।
जैसे महा हिमवान शिखर, मर्यादा लोक की रखता है,
वैसे ही राजा स्वय प्रजा के, नियम का बन्धन करता है ॥
महामलय शिखर का पवन सदा, चहूँ ओर सुगन्धि फैलाता,
उस ही प्रकार नरेश्वर की, यश कीर्त्ति सारा जग गाता ।
मेरु सम रहता अडिग सदा, कर्त्तव्य मार्ग के पालन मे,
देवो मे जैसे इन्द्र बडा राजा महान सारे जन में ॥

दोहा–उसी ही काल उस नगर में, आर्य सुधर्मा स्वामी ।
शिष्य पांच सौ साथ में, विचरत ग्रामो ग्राम ॥
पूर्णभद्र उद्यान में, आ ठहरे अणगार ।
सुनकर आये दर्श को, नगरी के नर नार ॥

तर्ज–राधेश्याम

दर्शन कर जनता प्रसन्न हुई, और धर्म कथा सुन लौट गई,
उस समय सुधर्मा स्वामी के, एक प्रमुख शिष्य अति अनुग्रई ।
काश्यप गोत्र के उजियारे, श्री जम्बू स्वामी नामी थे,
भर यौवन मे सयम लीना, जो मोक्ष मार्ग अनुगामी थे ।
श्री गुरुदेव के चरणो मे, जम्बू । एक ये अर्ज धरी,
वर्तमान शासन में वीर ने, जैन धर्म की आदि करी ।
साधु साध्वी श्रावक श्राविका, चार तीर्थ को स्थापन कर,
यावत् सिद्धि गति को पहुँचे, जो अनन्त ज्ञान के थे सागर ।
वीर ने उपासक दशा सूत्र, के सातवें अग मे फरमाया,
आनन्द कामदेवादि दस, जिन श्रावक का वर्णन आया ।
वो सुना आपके मुख से प्रभू, मुझको भी बडा आनन्द आया,
अब और सुनू आगे भी कुछ, इसलिये अर्ज एक गुरूराया ।
अन्तगड दशाग आठवा अग, हे प्रभू मुझे अब फरमावो,
श्री वीर ने क्या दर्शाया है, कर कृपा मुझे सब बतलाओ ॥

दोहा–प्रबल भाव लख शिष्य के बोले सुधर्मा स्वामी ।
आठ वर्ग जिसमें कहे, अन्तगड़दशा है नाम ॥
अध्ययन पहले वर्ग में, हैं कितने गुरूराय ।
दस अध्ययन इसमें कहे, सुनो जम्बू ! चितलाय ॥

तर्ज-राधेश्याम

पहले गौतम दूजे समुद्र, तीजे सागर चौथे गम्भीर,
पचम स्थिमित छठ्ठे हे अचल, और सातवे श्री कम्पिल गुणधीर।
आठवे अक्षोभ नवमे प्रसेनजित और दसवे है विष्णु कुमार,
जम्बू पूछे अब प्रभू बताओ, पहले अध्ययन का अधिकार।

— प्रथम अध्ययन —

पहले अध्ययन मे हे जम्बू ? गौतम का जीवन बतलाया,
मैं भी तुमको समझाता हूँ, जिस तरह प्रभू ने दरसाया।
इस अवसर्पिणी काल मे ही, और इस ही अन्तिम आरे मे,
बाइसवे श्री अरिष्ट नेमि, विचरत भू मण्डल सारे मे।
सौराष्ट्र देश की राजधानी, उस समय द्वारिका नगरी थी,
बारह योजन की लम्बी थी, चौडी नौ योजन जबरी थी।
उसको कुबेर ने स्वय अति, बुद्धि कौशल से बनवाई,
जिसके परकोटे बने हुये थे, स्वर्णमयी चहु दिश माई।
इन्द्र, नील, वैडूर्य आदि, मणियो के कगूरे प्रियकारी,
नगरी की शोभा अनुपम थी, अलकापुरी के सदृश भारी।
थे नगर निवासी सुखी बहुत, प्रमुदित हर्षित क्रीडा कारी,
आमोद प्रमोद के साधन से, नगरी की छवि थी अति न्यारी।
दर्शक के मन को हरलेती, जो देव लोक उणिहारिका थी,
सर्वोत्तम और असाधारण, दै दीप्यमान द्वारिका थी।
नगरी के उत्तर पूर्व मे, था पर्वत रैवतक भारी,
नन्दन वन था उद्यान जहा, सूत्रो मे महिमा है जारी।
प्राचीन था यक्षायतन एक, सुर प्रिय यक्ष का प्यारा था
वन खण्ड से घिरा हुआ जहा पर, एक अशोक वृक्ष भी न्यारा था।
उस द्वारिका नगरी के स्वामी, श्री कृष्ण थे वासुदेव नामी

महा हिमवान् शिखर जैसे, मर्यादा पालक गुणधामी।
समुद्र विजय मे दस दशार्ह महावीर पाच वलदेव जहा,
ये साडे तीन करोड प्रिय, प्रद्युम्न आदि कुमार वहा।
वो साम्ब मे साठ हजार शूर, शत्रु से पराजित नही होते,
सेनापतियो की अधीनता मे, छप्पन हजार सैनिक सोहते।
वीर सेनादि कार्य कुशल, इक्कीस हजार थे वीर वडे,
उग्रसेन सम सोलह सहस्त्र, हाजिर मे राजा रहते खडे।
रुक्मणी आदि सोलह हजार, यो राणिया जिनके प्रियकारी
और चौसठ कला में प्रवीण, थी जहा अनेक गणिकाये न्यारी।
यश कीर्ति शाली नागरिक, थे सेठ सेनापति सार्थ वाह,
सीमान्त राजा नगरी रक्षक, और वडे २ थे नगर शाह।
भरत क्षेत्र के तीन खण्ड में, जिनकी आण सहु लाज धरे,
ऐसे ही प्रतापी श्री कृष्ण जी, एक छत्र जहा राज करे।

दोहा-उस ही द्वारिका नगर में, राजा रहते एक,
अन्धक वृष्णि अति बली, रखे सत्य की टेक।
महारानी प्रिय धारिणी, अति सुन्दर गुणवन्त,
उत्तम लक्षण युक्त थी, मनही लख हरषन्त ॥

तर्ज-राधेश्याम

एक समय धारिणी महारानी, उत्तम शय्या परसोई थी,
कुछ जगी हुई थी मन ही मन, और कुछ निद्रा में होई थी।
शुभ स्वप्न एक देखा उसने, झट जागृत होकर उठ आई,
राजा के पास झट आकर के वो स्वप्न सुनाया सुखदाई।
शुभ फल वतलाया स्वप्ने का, रानी ने हर्ष से मन रख लिया,
फिर यथा समय रानी ने एक, सुन्दर वालक को जन्म दिया।
वाल्य काल वीता सुख में, फिर कला वहत्तर सिखलाई,

आठ राज्य कन्याये जिनको, यौवन वय मे परणाई।
भगवती सूत्र मे महावल के वैभव का जो वर्णन आया,
उस ही प्रकार इस गौतम ने, भोगो का सब साधन पाया।
आठ आठ कोटि सुवर्ण, चादी की चीजें अति भारी,
दहेज मे सब ही वस्तु थी, आठ आठ न्यारी न्यारी।

दोहा—उस ही काल उस समय में, अरिष्टनेमि भगवान्,
धर्म प्रवर्तक जो हुए, उस युग के दरम्यान।
विचरत आये द्वारिका, नन्दन वन उद्यान,
सुरनर आ सेवा करे, कथा सुने धर ध्यान॥

तर्ज—राधेश्याम

भवन पति और वाणव्यन्तर, ज्योतिषी वैमानिक आये थे,
नरनारी और तिर्यन्च भी थे, सब कथा मे ध्यान लगाये थे।
श्री कृष्ण जी पहुचे महलो से, गौतम भी सुनकर हर्षाया,
ज्ञाता सूत्र मे मेघकँवर सम, धर्म कथा सुनने आया।
भगवन् की वाणी सुन करके, वैराग्य भाव हृदय छाया,
गौतम ने प्रभू के समीप आ, अपने भावो को दरसाया।
मैं मात पिता की आज्ञा लू, तब दीक्षा दे उपकार करो,
भगवन् ने तुरत ही फरमाया, जिसमे सुख हो वही शीघ्र करो।
वहा से चल आये महलो मे, फिर मात पिता को वतलाया,
प्रभू वाणी सुन वैराग्य हुआ, मै आज्ञा लेने को आया।
सुनकर धारिणी अति दुखी हुई, एक आह भरो मूर्छा आई,
ज्ञाता सूत्र के मेघकवर सम, सारी लीला दरषाई।
गौतम ने बहुत ही समझाया, जीवन क्षणभगुर वतलाया,
ससारो सुख सब नश्वर है, और झूठी है जग की माया।
इस तरह प्रेम से समझा के, सारे वैभव को छोड दिया,

फिर नेमि नाथ के समीप आ, गौतम ने सयम भार लिया।
निर्ग्रन्थ वचन पर श्रद्धा की, ईर्या भाषा का ध्यान रखा,
सावद्य निरवद्य योग समझा, आवश्यक छः अग ग्यारह लखा।
उपवास वेला तेला, चोला, अर्धमास मास खमण कीने,
तपस्या मे तन को लगा दिया, और आत्म भाव मे लीन बने।

दोहा—नगर द्वारिका से किया, प्रभू ने पाद विहार,
देश विदेश विचरण किया, लेय शिष्य परिवार।
एक समय श्री नेमि प्रभू, बैठे थे तिणवार,
करे अर्ज एक भाव से, श्री गौतम अणगार॥

तर्ज—राधेश्याम

आदक्षिण प्रदक्षिण तीन वार, करके प्रभू को वन्दन कीना,
फिर विनय भाव से अपने मन के भावो को यू कह दीना।
हे प्रभो आज्ञा हो आपकी तो, भिक्खु पडिमा स्वीकार करू,
जिस मे सुख हो वैसा ही करो, शुभ काम को शीघ्र ही करो शुरू।
आज्ञा पा हर्षित हो गौतम, पहले सम्यक् आराधन किया।
जिस प्रकार स्कन्दक मुनिवर का, भगवती सूत्र मे हाल दिया।
बस इसी तरह गुणरत्न सवत्सर तप को भी पूर्ण कीना,
शत्रुजय पर्वत पर पहुँचे, स्कन्दक ज्यू हो व्रत लीना।
बारह वर्ष दीक्षा पाली, मासिक सलेखना धार मुवे,
कर्मो को खपाकर श्री गौतम, फिर सिद्ध बुद्ध और मुक्त हुये।

दोहा—सुधर्मा स्वामी कहे, सुन जम्बु धर ध्यान,
मोक्षगति को प्राप्त जो, महावीर भगवान।
प्रथम अध्ययन मे कहा, जिनने सारा सार;
वही दरसाया है तुम्हे, गौतम का अधिकार॥

—: तर्ज-राधेश्याम :—

इसी तरह हे जम्बू तुम, बाकी के नौ अध्ययन जानो,
नाम से हैं सब अलग-अलग पर क्रिया से एक ही मानो।
उन्ही अन्धक वृष्णि राजा, और धारिणी के नौ नन्दन है,
सब इसी तरह वैरागी हुये, सब ही का एक सा वर्णन है।
समुद्र कुमार, सगार कुमार, तीजे गम्भीर कुवर जानो,
स्तिमित, अचल और कम्पिल जी, सातवें अक्षोभ कुवर मानो।
प्रसेन चित है आठवे और, नवमे है श्री विष्णु कुमार,
शेष नौ अध्ययन मे जम्बू, इन नौ हीं का सारा अधिकार।
पहिले गौतम और शेष ये नौ, यो दस अध्ययन बतलाये हे,
अन्तगड दशा के प्रथम वर्ग मे, यही भाव दरशाये हैं।

— द्वितीय वर्ग —

दोहा—स्वामी सुधर्मा से कहे, श्री जम्बू अणगार;
श्री मुख से मैंने सुना, प्रथम वर्ग अधिकार।
अब मैं दूसरे वर्ग का, सुनना चाहूँ सार।
श्री वीर ने क्या कहा, फरमाओ करतार॥

—: तर्ज—राधेश्याम :—

स्वामी सुधर्मा फरमावे, जम्बू ने भी झट चित्त दीना,
दूसरे वर्ग मे आठ अध्ययन का, प्रभू ने प्रतिपादन कीना।
अरिष्ठ नेमि भगवान ही जब, द्वारिका मे विचरते थे,
महा प्रतापी अन्धक वृष्णि, राजा एक जहा रहते थे।
धारिणी नाम की रानी थी, उनके ही आठ कवर नामी,
जो धर्मवीर गुणशाली और, सब ही थे धर्म के अनुगामी।
अक्षोभ, सागर, समुद्र और, हिमवान, अचल पाचवें मानो,

वरण छट्ठे सातवे पूरण, और अभिचन्द आठवें जानो।
प्रथम वर्ग मे जम्बू जो, गौतमादि दस अध्ययन आये,
वैसे इन आठ कुमारो के, ये आठ ही अध्ययन दरसाये।
जैसे उन दस ही कुमारो ने, तप जप सयम के रस लीने,
वैसे ही इन आठो ने करके, कर्म शत्रु को वश कीने।
सोलह वर्ष सयम पाला, फिर शत्रुजय पर्वत पर जा,
एक मास सलेखना करके, सिद्ध बुद्ध हुये मुक्ति पा।
पहले वर्ग के दस कुमार, और दूसरे वर्ग आठ मानो,
एक ही माता के है ए लाल, ये अट्ठारह भाई जानो।
अक्षोभ आदि ये आठ अध्ययन को, दूसरे वर्ग मे बतलाया,
श्री वीर ने जैसा कहा हे जम्बू, वैसा ही तुमको दरसाया॥



— तृतिय वर्ग —

दोहा–जम्बू कहे कर जोड के, कृपा करो हे स्वामी।
भाव तीसरे वर्ग के, फरमाओ गुणधामी॥
सुधर्मा स्वामी कहे, सुनो जम्बू चितलाय।
अंग आठ त्रिय वर्ग मे, हैं तेरह अध्याय॥

तर्ज–राधेश्याम

अणीय सेन, अनन्त सेन, तीजे अजित अति प्रियकारी,
अनिहत रिपु, और देव सेन, श्री शत्रु सेन, सारण भारी।
आठवें गज नवमे सुमुख, और दसवे दुर्मुख गुणधारी,
ग्यारहवे कूपक बारहवें दारुक, तेरहवे अनादृष्टी जारी।
जम्बू कहे हे नाथ ? बताओ, पहले अध्ययन का अधिकार,
श्री अणीयसेन कुंवर ने कैसे, किया है इस जग से उद्धार।

[illegible]

दोहा—आठ वर्ष की उम्र में, वल्लभाचार्य के पास,
शिक्षा लेने को गये; गौरव स्नेह समास।
पारंगत जब हो गया, सभी कला के साथ,
यशावस्था दूर कर, मात पिता पश्चात॥

— तर्ज—राधेश्याम —

[illegible]

भगवती सूत्र मे महावल का, जिस तरह से वर्णन आया है
उमी तरह से ऋद्धि मिली, वैसा ही सब सुख पाया है।
महलो में निरन्तर बजे मृदग, बत्तीस रमीणिया भी वलिहार,
पुण्यो पार्जित मनुष्य सम्वन्धी, भोगो को वह भोगे अपार।
उस ही काल उस समय मे आये, अरिष्ट नेमि भगवान वहा,
भद्धिलपुर के वाहर ही विराजे, श्री वन था उद्यान जहा।
अवग्रह लेकर विचरते थे जो, नित मर्यादा के अनुसार,
धर्म कथा, दर्शन हित आ रहे, नगरी के सारे नरनार।
जन समुदाय कोलाहल सुन, श्री अणीय सेन भी हुये तैयार,
गोतम कुमार के समान ही, महलो से आये कथा मझार।
भगवन् की वाणी सुन कर के, वैराग्य चढा छोडा ससार,
मात पिता की आज्ञा ले, श्री अणीय सेन वन गये अणगार।
गोतम कुमार के समान ही, इनने भी ज्ञानोपार्जन किया,
सामायिक आदि चवदह पूर्व का, और भी ज्यादा अध्ययन किया।
वीस वर्ष दीक्षा पाली, फिर शत्रुजय पर्वत पर जा,
मास सलेखना सहित सिद्ध और बुद्ध, मुक्त हुये कर्म खपा।
तीसरा वर्ग पहला अध्ययन, श्री अणीय सेन का दरसाया,
स्वामी सुधर्मा कहे हे जम्बू, प्रभू ने कहा सो वतलाया।

दोहा—अणीयसेन समान ही, आगे पांच अध्ययन।
अनन्तसेन, अजितसेन, अनिहत रिपु, देवसेन ॥
शत्रुसेन हे पांचवें, ये सब मिल छह भ्रात।
श्री नाग के पुत्र थे, सुलसा के अंग जात ॥
बत्तीस करोड की सम्पदा, सबके सहु सुख चैन।
वाणी सुन सब त्यागकर, बन गये साधु जैन ॥

बीस वर्ष दीक्षा पली, चउदह पूर्व ज्ञान।
एक मास संलेखना, पाया पद निर्वान॥
वर्ग तीसरा छह अध्ययन, पूर्ण हुये यों जान।
जम्बू कहे अब सातवां, फरमाओ भगवान॥

※ तर्ज—राधेश्याम ※

स्वामी सुधर्मा कहे सातवा, अध्ययन अब बतलाता हूँ,
जो श्री वीर न फरमाया, वही आज तुम्हे दरसाता हूँ।
उसी ही काल उस समय मे जम्बू, द्वारिका नगरी सुखकारी,
वसुदेव थे राजा जहा, और रानी धारिणी गुणधारी।
सुख सैया पर सोये एक दिन, रानी को सिंह स्वप्न आया,
और गर्भ काल पूरा होने पर, सुन्दर पुत्र रत्न जाया।
सारण कुमार दिया नाम पुत्र का, बहत्तर कलाये सिखलाई,
यौवन वय मे मात पिता ने, योग्य कन्या भी परणाई।
पचास करोड सोनैया जिनके, कन्यादान मे आया था
श्री अरिष्ट नेमि की वाणी सुनकर, सब वैभव छिटकाया था।
सारण कुमार ने दीक्षा ले, चवदह पूर्व का ज्ञान किया,
बीस वर्ष दीक्षा पाली, तप जप सयम मे ध्यान दिया।
गौतम कुमार की तरह ही सारण, शत्रुजय पर्वत पर जा,
एक मास सलेखना करके, सिद्ध बुद्ध हुये मुक्ति पा॥

दोहा—वर्ग तीसरे के हुये, अध्ययन सात समाप्त,
जम्बू कहे अब आठवां, फरमाओ जगनाथ।
स्वामी सुधर्मा यूं कहे, सुनो जम्बू चितलाय,
अति रोचक वर्णन कहा, आठवे अध्ययन माय

तर्ज—राधेश्याम

वन्दन करके छ हो मुनिवर फिर सहसाम्र वन बाहिर आ,
दो दो मुनि के कर तीन संघाडे, पहुँचे द्वारिका नगरी जा।
शीघ्रता रहित चपलता रहित, न लाभालाभ की चिन्ता है,
सम्भ्रान्ति रहित, उद्वेग रहित, भावो मे अति निर्मलता है।
ऊच नीच मध्यम कुल से, निर्दोष आहार को लाने मे,
एक संघाडा जा पहुचा, फिर, सीधा राज घराने मे।
वसुदेव की रानी देवकी ने, जब देखा आये मुनिराई,
आसन से उठकर सात आठ, घर कदम सामने झट आई।
है धन्य आज मेरे घर पर, ये सन्त पधारे सुखदाई,
सन्तुष्ट चित आनन्दित हो, वो अन्त करण से हरषाई,
मन मे अत्यन्त प्रसन्नता थी और प्रेम भाव था उर माई।
फिर विधी पूर्वक वन्दन कर, मुनियो को रसोई घर लाई,
वहा सिंह केसरी मोदक का, भर थाल हाथ से वहराया।
फिर विनय पूर्वक वन्दन कर, मुनियो को बाहिर पहुचाया,
उसके बाद ही दूजा संघाडा, नगरी मे घूमता यहा आया,
महारानी ने भी उसी भाव से, उनको मोदक वहराया।

दोहा—दैवयोग से तीसरा, पहुंचा संघाडा आय।
उसी भाव से देवकी, झट मोदक वहराय॥
वन्दन कर कहे देवकी, एक शंका मन मांय।
आज्ञा हो गर आपकी, तो पूंछूं मुनिराय॥
शंका मन में मत रखो, प्रकट कयो हरषाय।
आज्ञा पा मुनिराज की, रानी कहे सिरनाय॥

सयोग वशात् हे महारानी ! वे तीनो सघाडे यहा आये।
मत एक ही तुम सबको समझो, है अलग २ सब मुनिराये,
नही हम हो आये बार २, वे न्यारे थे हम न्यारे है।
इस तरह देवकी को समझा, मुनि अपने स्थान पधारे है।

दोहा—मुनि गये पर देवकी, छोडे नही विचार।
संकल्प विकल्प उठे, मन में अति अपार॥
उस समय में आगई, बचपन की एक याद।
पोलासपुरी में जो कही, अतिमुक्तक मुनि बात॥
आठ पुत्र होंगे तेरे, नल कुबेर समान।
आकृति वय और कान्ति में, एकही सम सब जान॥
तेरे सम हे देवकी, !, भरतक्षेत्र मंझार।
जन्म न देगी कुंख से, कोई ऐसे सुकुमार॥

तर्ज-राधेश्याम

मुनि वाणी असत्य नही होती, पर आज असत्य क्यो हो रही है,
दूसरी माता के देख लाल, जो स्वय देवकी मोह रही है।
अतिमुक्तक सत्य के भाषी है, प्रत्यक्ष असत्य नजर आता,
केवल ज्ञानी के सिवा मेरा यह, सशय कौन मिटा सकता।
भगवान अरिष्ट नेमि के पास, जाने की करी है तैयारी,
झट धार्मिक रथ तैयार करो, सेवक को आज्ञा दे डारी।
घोडो को जोत सारथी सहित, उस रथ को पास मेरे लाना,
सेवक ने वैसा ही तुरत किया, रानी का था जो फरमाना।
जिस तरह मात देवानदा, महावीर के दर्शन को धाई,
बस उसी तरह से अरिष्ट नेमि के, दर्शन को देवकी आई।

भगवन् के पास आ दर्शन कर, फिर वन्दन नमस्कार कीना,
रानी बोले उसके पहले ही, भगवन् ने यूं कह दीना।
छह अणगार को देख आज, यह तेरे मन संशय आया,
और पोलासपुरी में अतिमुक्तक, मुनि ने भी भेद यह बतलाया।
नल कुबेर के सम होवेंगे, आठ पुत्र तेरे अंगजात,
भरत क्षेत्र में तेरे सम, नहीं होगी और कोई भी मात।
पर दूसरी माता ने जन्मे, ये कैसे सुन्दर छह भाई,
असत्य हो रहे प्रत्यक्ष में जो वचन कहे थे मुनिराई।
प्रभू पास जा शंका दूर करूं, यही भाव के रथ चढ़ आई हो,
सच कहो देवकी! यही भाव, क्या मन में ले यहां आई हो।

दोहा—देवकी कहे प्रभु आपने, जो फरमाया नाथ,
संशय मेरे मन यही, सत्य है सारी बात।
अब समाधान भी आपही, करिये दीनदयाल,
प्रभु कहे देवानु प्रिये!, सुनो सत्य सब हाल॥

तर्ज—राधेश्याम

उसही काल उस समय में एक, भद्दिलपुर नगर था सुखकारी,
और नाग गाथापति रहता था, जो अन्न धन से सम्पन्न भारी।
सुपत्नि सुलसा थी जिसके, उसकी एक बात सुनो धर ध्यान,
वो बाल अवस्था में थी तब, एक नैमित्तिक ने किया निदान।
उस भविष्यवक्ता ने, उसके, यूं मात पिता को दरसाया,
यह कन्या मृत वध्या होगी, सुलसा के हित यूं बतलाया।
फिर हरिणगमेषी देवकी उस, बालिका ने की नित्य पूजा,
पहले प्रतिमा की सेवा थी, सब काम पीछे होता दूजा।
प्रतिदिन स्नान आदि करके, भीगी साडी को धारण कर,

फल चढा घटनो को टेक, वन्दन करती थी भावना धर।
उसको पूजा सुश्रुषा से, वह देव प्रसन्न हुआ भारी,
अनुकम्पा ला एक करी योजना, जिसकी यह लीला सारी।
उस ही प्रभाव से महारानी, तूम और सुलसा दोनो नारी,
एक साथ ही ऋतु मनी होती और साथ ही होती गर्भ धारी।
एक साथ गर्भ पालन करती, बच्चे भी साथ जन्मते थे,
तेरे तो सुन्दर होते लाल, उसके मृत बच्चे होते थे।
उसके मृत बच्चो को लाकर, वो तुरत तेरे यहा पहु चाता,
तेरे बच्चो को ले जाकर, वो देव सुलसा के रख आता।
नौ महिना साढे सात रात, के बाद प्रसव होता था साथ,
अनुकम्पा ला सुलसा पे देव ने,, काम किये सब अपने हाथ।
अति मुक्तक मुनि के वचन सत्य, कहे प्रभू, देवकी सच मानो,
सुलसा गाथा पति के नही, ये सभी पुत्र अपने जानो।

दोहा:—प्रभू के मुख से देवकी, सुन सारा विस्तार,
हृदय में धारण किया, हर्षित हुई अपार।
वन्दन कर प्रभू को गई, जहां थे छः अणगार,
पुत्र प्रेमवश स्तनों से; बही दूध की धार॥
नैना आँसू हर्ष के, प्रफूलित सारा अंग।
कस टूटी कंचुकी की; आभूषण हुये तंग॥

तर्ज–राधेश्याम

वर्षा की धारा पडने से, ज्यो कदम पुष्प विकसित होता,
उन छह पुत्रो को देख २, त्यो रोम २ हर्षित होता।
बहुत काल तक रही निरखती, मुनियो को देवकी महारानी,
फिर वन्दन कर वापिस पहुँची, जहा बेठे थे भगवन ज्ञानी।

आदक्षिण प्रदक्षिणा, तीन बार कर प्रभु को कीना नमस्कार,
फिर धार्मिक रथ पर चढ़ के देवकी चल द्वारिका नगर मझार ॥
बाहरी शाला के पास में आ, धार्मिक रथ से गई उतर,
और अपने भवन में जा करके, फिर बैठी सुकोमल शय्या पर ।
मन में तब चिन्ता व्याप्त हुई, और विचारों को [illegible] गई आसा,
आकृति कान्ति और वय में सरीखे सात पुत्रों की मैं हूं मां ॥
नल कूबेर सरीखे जाये पुत्र, फिर भी मैं अभागिन नारी हूं,
नहीं लाड़ लड़ाया किसी को भी, नहीं गोदी मैंने खिलाये हैं ।
ये कृष्ण भी माता नन्दन को घर जन्मदिन से बाद बड़ा,
उसको भी केवल जन्म दिया, बचपन उसका वहां बिता रहा ॥
वो भाग्यशाली माताएं हैं, जो तब ही बात कहाती हैं,
मन मोहनी तोतली बोली सुने, और स्तन-पान कराती हैं ।
मा मा के शब्द को श्रवण करती स्तन में दूध तब भर आता,
वे भोले बालक मीठे बोल, तुतले भाषा में समझाते ।
कोमल से सोमल हाथों में, भर मोती गोदों में लेती,
नहलाती धोती गाती है, शृंगार तिलक लगा कर देती ॥
मैं अधन्या हूं अपुण्या हूं, जो बाल सुख नहीं लख पाई,
इस तरह देवकी चिन्तित हृदय हो, आर्त ध्यान करे मन मांही ।

दोहाः—इतने में ही स्नान कर, वस्त्राभूषण धार ।
चरण वन्दने आ गये, नरवर श्री कृष्ण कुमार ॥
चिन्तित देखी मात को, विस्मय हो नंदलाल ।
प्रथम चरण वन्दन किया, फिर पूछे तत्काल ॥
अबतक मुझको देखकर, हर्षित होती मात ।
आज उदासी क्यों रही, प्रकट करो मन बात ॥

तर्ज—राधेश्याम

देवकी कहे हे पुत्र ! सुनो, मुझसे जन्मे है सात बाल,
आकृति कान्ति वय मे समान, नल कुवेर से है सारे लाल।
उनमे से एक भी मोहन, नही बाल क्रीडा से नाता है,
तू स्वयं चरण वन्दन को कृष्ण, छह छह महिने मे आता है॥
इसलिये समझती हू कि धन्य वे माताए पुण्यशाली हैं,
बाल क्रीडा के आनन्द का जो पुण्य से अवसर पाली है।
माता होकर अधन्या हू मै, पुण्य कर्म से हेटी हू।
बस इसी बात के सोच में हूं, और उदासीन हो बैठी हू।
श्री कृष्ण कहे चिंता छोडो, मै आर्तध्यान मिटाऊंगा,
मेरे एक छोटा भाई हो, मै ऐसा उपाय लगाऊंगा॥
प्रिय मधुर वचनो से फिर, माता को धैर्य बधाया है,
वहा से चलकर फिर श्री कृष्ण, पोषधशाला मे आया है।
अष्टम भक्त तप जिस प्रकार की अभयकुवर ने ठाया था,
अपने मित्र का किया आराधन देव लोक से आया था॥
बस इसी तरह श्री कृष्ण ने भी यहा तप तेले का ठाया है,
और हरिणगमेषि देव के हित, आराधन मे चित्त लाया है।
हो गया तुरत हाजिर आ देव, श्री कृष्ण से बोले क्या चहिये,
क्यो याद किया, मैं हू हाजिर, अब मन का मनोरथ झट करिये॥
श्री कृष्ण कहे कर जोड के तव, हे देव ! मेरी चिता चूरो,
मेरे हो सहोदर भाई एक, इस इच्छा को जल्दी पूरो॥

दोहा—देवलोक से देव एक करके आयु समाप्त,
यहां आ होगा आपका लघु सहोदर भ्रात।
बाल अवस्था पूर्ण कर, युवा अवस्था मांय,
अरिष्ट नेमि प्रभू पास में, मुंडित होगा जाय।

पुनः पुनः कह शब्द ये, दे वांछित वरदान,
हरिणगमेषी देव फिर, पहुंचा अपने स्थान ॥

तर्ज–राधेश्याम

तेले का तप पूर्ण करके पौषधशाला से चल आये,
महारानी देवकी के चरणों को, वन्दन कर यूं बतलाये।
माताजी चिन्ता को छोड़ो, लघु भ्राता मेरे होवेगा,
मन इच्छित फल तुम पावोगी, वो जन जन का मन मोवेगा ॥
इस तरह इष्ट और प्रिय मनोहर, वचनों से संतोष दिया,
मनोनुकूल आशा को पूर्ण कर श्री कृष्ण ने अपना स्थान लिया।
पुण्यशाली जिस पर सोते हैं, ऐसी सुख शय्या सानानी,
सोते में सिंह का स्वप्न लखा झट जाग्रत हो गई महारानी ॥
वसुदेव से सारा हाल कहा, इच्छित फल का संकेत मिला,
वो गर्भ का पालन करने लगी, हृष्ट तुष्ट मन अति खिला।
नौ महिने साढे सात दिवस, के बाद एक नन्दन जाया,
जपा कुसुम, बन्धुक पुष्प और पारिजात सा सुखदाया ॥
जो सूर्योदय की प्रभा के सम, और लक्षा रस के सम जानो,
गज तालु के सम सुकुमाल, वो नयन हरण सुन्दर जानो।
मेघ कुंवर समान ही, इनका भी जन्मोत्सव कीना,
गज तालु सम तन सुकोमल, गजसुकुमाल नाम दीना ॥
बचपन से यौवन वय का हाल, बस मेघकुंवर के सम जानो,
सब विद्या में परिपूर्ण हुए, ज्यूं चढ़ती ज्योति कला मानो,

दोहा—उसी समय उस काल में, द्वारिका नगर मंझार,
सोमिल ब्राह्मण एक था, वैभव पति अपार।
ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद लिया जान,
अथर्ववेद इन चारों का; सांगोपांग निधान ॥

—: तर्ज- राधेश्याम :—

उस ब्राह्मण की पत्नि का नाम, था सोमश्री अति सुन्दर थी,
एक कन्या थी सोमा उसके, उससे भी अधिक सुन्दर थी।
आकृति और लावण्य मे तो, उत्कृष्ट ही रूपवती मानो,
थी पाचो इन्द्रिया परिपूर्ण, अव्वय से शोभा वति जानो।
एक रोज वह सोभा बालिका, स्नानादि कर सज सिणगार,
वस्त्र भूषण से अलंकृत हो अनेक दासियो को ले लार॥
राज मार्ग पर चलकर आई, स्वर्ण गेंद को रही उछाल,
सभी दासिया खिला रही है, यह भी फेक रही तत्काल।
उसी काल उस समय मे देखो, नगर द्वारिका के दरम्यान,
अहोभाग्य से आ गये विचरते, श्री अरिष्ट नेमि भगवान॥
धर्म कथा सुनने को परिषद, चहु दिशा से दौडी आई,
श्री कृष्ण ने सुना आगमन, लगन लगी दर्शन ताई।
स्नान करो वस्त्राभुषण से अलकृत हो गज असवार,
लघु भ्राता गजसुखमाल को, भी ले लीना अपने लार॥
कोरण्ट फुलो की गले माल, और छत्र चामर शोभा पाये,
दर्शन करने को श्री कृष्ण, अब नगर बीच होकर जाये।
उस राज मार्ग मे खेल रही सोमा को कृष्ण ने देख लिया,
रूप लावण्य कान्ति यौवन ने हरीजी के मन को हरण किया॥
फिर तुरत बुलाया सेवक को, हे देवानुप्रिय! झट जावो,
कर कन्या याचना सोमिल से इसको अन्त पुर पहुचाओ।
कहना कि आपकी यह कन्या, यादव कुल मे जा सोवेगी,
गजसुकुमाल कुवर की वहा, यह जाके भार्या होवेगी॥
आज्ञा पाते ही चला तुरत, सेवक आया सोमिल के पास,
श्री कृष्ण ने जैसे कहा था, वैसे ही करदी अरदास।

भगवान अरिष्टनेमि के पास मे, दीक्षा ही लेना चहाता हूं।

दोहा:—श्री कृष्ण, वसुदेव जी, और देवकी माय,
प्रतिकूल-अनुकूल सब, बात बता समझाय।
पर नही मानी एक भी, गजसुकुमाल जी, बात,
ताहोके असमर्थ फिर, यूं बोले अब तात ॥

* तर्ज—राधेश्याम *

हे पुत्र! हमारी एक इच्छा, वो तुमको अब बतलाते है,
राज सिंहासन बिठा तेरी राज्य श्री देखना चाहते हैं।
इसलिये एक दिन ही के लिये, तुम राज्य लक्ष्मी को स्वीकारो,
यही हम सबकी इच्छा है, इसको तुम हरगिज मत टारो ॥
माता पिता भाई का जब, अनुरोध देख चुप रहते है,
बडे समारोह से इनका फिर, राज्याभिषेक कर देते है।
गज सुकुमाल बने राजा, तुम सबही के मन भाते हो,
अब मात पिता पूछें हे पुत्र!, बोलो तुम अब क्या चाहते हो।
मैं दीक्षा लेना चाहता हूं, यही आज्ञा झट तैयारी करो,
महाबल के सम दीक्षा धारी, और त्याग दियो वैभव सगरो।
ईर्या समिति आदि से युक्त, तप जप संयम के धारी हैं,
गज सुकुमाल जी इन्द्रियवश कर, हुये गुप्त ब्रह्मचारी हैं।
जिस दिन दीक्षा ली उस दिन ही, मुनि चौथे पहर मे आते हैं,
तीन बार वन्दन कर प्रभु को, मन के भाव दरसाते हैं।
हे भगवन्! आपकी आज्ञा हो तो मम इच्छा चरणो मे धरू,
महाकाल श्मशान मे जा, भिक्षु प्रतिमा स्वीकार करू।
अरिष्ट नेमि भगवन बोले, देवानुप्रिय! यही है कहना,
जिसमे सुख हो वही शीघ्र करो, शुभ काम मे देरी नहीं करना।
आज्ञा पा वन्दन किया तुरत, उद्यान से बाहर चल आये,

श्मशान मे आ प्रासुक भुमि की, प्रतिलेखना झट ठाये।
कायोत्सर्ग करके खडे हुये, काया से कुछ नीचे नम कर,
चार अ गुल अन्तर पैर रखे, और दृष्टि रही एक पुद्गल पर।
एक रात्रि का भिक्षु पडिमा, स्वीकार करी है शुद्ध भावे,
ध्यानस्थ खडे है अडग मुनि, नहीं और कही दृष्टि जावे।
मुनि के श्मशान मे आने से, पहले सोमिल ब्राह्मण आया,
समिध सामग्री लाने को, इस रास्ते से आगे धाया।
हवन के हित कुश, डाभ लिये, इस ओर ही वो वापिस आया,
जब दृष्टि पडी श्मशान ओर तो, देख मुनि आश्चर्य पाया।
फिर पास मे आके देखा तो, वो गज सुकुमाल खडा यहा पर,
जागृत हो गया पूर्व का वैर, वो बोला क्रोध मे झट आकर।
अरे! यह तो वहा है निर्लज्ज, श्री कान्ति रहित मृत्यु का ग्रास,
पुण्य हीन दुर्लक्षण है, दे दिया सुता को व्यर्थ ही त्रास।
अ ग जात मेरी सोमा, यौवन वय मे और है निष्पाप,
निष्कारण ही उसे छोड दी, और बन गया साधू आप।
है उचित मुझे बदलालू इससे, यो विचार लगाता है,
चारो दिशाओ मे देखा, कोई इधर न आता जाता है।
पास ही तालाब मे जा कर के, गीली मिट्टी लाया तत्काल,
गजसुकुमाल मुनि के सिर पर, उस मिट्टी की बाधी पाल।
पास मे एक चिता जल रही थी, उसमे से अ गारे लाल,
एक ठीकरे मे भर लाया, दिये मुनि के सिर पर डाल।
मुझको कोई देख न ले, फिर इस भय से भागा उस बार,
जिस दिशा से आया था बस उसी दिशा मे पहुचा जार।

दोहा-खदबद २ खीचडी. सीजे हाडी माय,
अस्ह्य अनंती वेदना, सह रहे हैं मुनिराय।

नसें फटी तड तड कटी, वो सुकुमाल शरीर,
जाज्वुल्य मान ौर दुःखमयी, उत्पन्न हो गई पीर !!

— तर्ज–राधेश्याम —

पहचान लिया था सोमिल को, फिर भी ममता का रस पीना,
समभावो मे रमण किया, नही क्रोध लेश मात्र कीना।
शुभ अध्यवसाय परिणामो से फिर काट दिया कर्मो का जाल,
अनन्त, अनुत्तर, निरावरण फिर, पाया केवल ज्ञान विशाल।
गजसुकुमाल कर्म क्षय करके, उसी समय विशुद्ध हुये,
लोका लाक को देख लिया फिर, सिद्ध वृद्ध और मुक्त हुये
कम विकार से दूर हुये, और सभी दुखो का कीना नाश,
एक दिवस का सयम पाला, मोक्ष पुरो कर दीना वास।
वहा समीपवर्ती देवो ने, उस समय विचार लगाया है,
चारित्र का सम्यक् अराधन इन, गजसुकुमाल ने ठाया है।
यो सोच सुगन्धित और अचित, जल से भूमि सरसा दोनी,
पाच वर्ण के अचित फूल, और वस्त्रो की वर्षा कीनी।
दिव्य मधुर गायन हो रहे है, और वाद्य की ध्वनि अपार,
वैक्रिय शक्ति थी देवो की, गूज उठा नभ म झनकार।
ईधर दूसरे दिन दीक्षा के सूर्योदय हो जाने पर,
स्नानादि कर श्री कृष्ण, अलकारो से स धज कर।
कौरण्ट फूलो की माला युक्त वो, छत्र शीम पर सोहता है,
श्वेत चामर बीजाते है सुभट का दल सग होता है।
श्री कृष्ण द्वारिका नगरी के, उस राज मार्ग से चल आये,
अरिष्ट नेमि भगवन के दर्श को, आज चले है हरपाये।
तब नगर बीच देखा उनने, एक वृद्ध दुखी अति जरजर था,
और विशाल ईटो का ढेर पडा, एक उसी मार्ग के अन्दर था।

वह वृद्ध उठाकर एक ईट, अन्दर घर मे ले जाता था,
एक उठा रख आता था, फिर आकर एक उठाता था।
श्री कृष्ण को अनुकम्पा आई, एक ईट उठा रथ दी निज हाथ,
अन्य लोग सब लगे उसी क्षण, सभी ईट उठ गई एक साथ।
इस प्रकार श्री कृष्णचन्द्र के, ईट उठाने से उस वार,
वृद्ध पुरुष के चक्कर बच गये, दूर हो गया कष्ट अपार।
फिर द्वारिका नगरी मे होकर, भगवन् के पास मे आये है,
अरिष्ट नेमि प्रभु को वन्दन कर, अपने भाग्य सराये है।
नव दीक्षित गजमुखमाल मुनि और लघु सहोदर भ्राता को,
वन्दन करने की इच्छा मे, अब देख रहे है इत उत को।
फिर प्रभू से बोले हे स्वामी! गजमुखमाल को देख न पाता हूँ,
कर कृपा बतावे वह कहा है? मै वन्दन करना चाहता हूँ।
तब प्रभू कहे हे कृष्ण सुनो, उन गजमुखमाल मुनि जन ने
जिस आत्म अर्थ हित दीक्षा ली, उसको सिद्ध कर लीना उसने।
आश्चर्य चकित हो पूछे कृष्ण हे प्रभु! कृपा कर बतलाओ
कैसे अर्थ को सिद्ध किया मुनिवर ने, मुझको फरमाओ।
इस तरह पूछने पर हरि को, भगवान् ने फिर यू फरमाया।
कल दीक्षा लेने बाद मुनि यहा, चौथे पहर वन्दन आया॥
वन्दन कर इच्छा प्रकट की यो भगवान् जो आज्ञा पाता हू।
एक रात को भिक्षु प्रतिमा हित, श्मशान मे जाता हूँ॥
'जिसमे सुख हो वैसा ही करो' ये वचन कृष्ण जब मैंने कहे।
श्मशान मे जाकर वे मुनिवर फिर, ध्यान लगा कर खडे रहे॥
हे कृष्ण उस समय एक पुरुष, आया और देखा जब अणगार।
पूर्व भव का वैर जग गया, उसे क्रोध झट चढा अपार॥
तालाब से मिट्टी लाकर के मुनि के सिर पर फिर बाधी पाल।
मिट्टी के ठीकरे मे डाले, एक चिता से ले अग रे लाल॥

उन अत्यन्त लाल अ गारो को, उसने झट सिर पर डाल दिया,
अत्यन्त वेदना सही मुनि ने, पर नही किंचित रोष किया।
शुभ परिणामो से पा केवल, फिर गजसुखमाल ने मोक्ष लिया॥
इसलिए ही मैने कहा कृष्ण, उनने निज कार्य को सिद्ध किया॥
कहे कृष्ण बताओ नाथ मझे, वो पुरुष कौन जिसने मारा॥
लज्जा रहित वह पापी कौन, जिसने मृत्यु को ललकारा॥
मेरा सहोदर लघु भ्राता, गजसुखमाल मुनि का घात।
अकाल मे ही प्राण लिये है, कौन बताओ जल्दी नाथ।
भगवान बोले उस पुरुष के ऊपर, क्रोध करो मत गिरधारी।
मोक्ष प्राप्त करने मे मुनि को, उसने सहायता दी भारी॥

दोहा—किस प्रकार दी सहायता, शीघ्र बताओ नाथ।
श्री कृष्ण यूं पूछते, प्रभू से जोडी हाथ॥
प्रभू कहे तू आ रहा, मुझ वन्दन हित आज।
दुर्बल वृद्ध की ई ट रख, दिया ज्यों उसको साज॥

तर्ज-राधेश्याम

हाथी पर बैठे बैठे ही, एक ई ट रखा अनुकम्पा ला।
सारी ई टो का ढेर उठा, उस वृद्ध का सारा दुख टला॥
बस इसी तरह लाखो भव मे, संचित कर्मो के बन्धन का।
क्षय करने मे दिया योग, उस भाई ने इन मुनिजन का॥
श्री कृष्णचन्द्र फिर यू पूछे, हे प्रभू! इतना तो दरसाओ।
उस पुरुष को कैसे जान सकू गा, मुझको यह तो फरमाओ॥
हे कृष्ण अभी यहाँ, से जाकर, जब नगर प्रवेश करोगे तुम।
तुम्हे देखते ही जो पुरुष बस खडा खडा हो जावे गुम॥
आयु की स्थिति क्षय होने से, होगा प्राप्त मृत्यु को वह।

फिर वहा से चल कर श्री कृष्णचन्द्र, अपने महलो मे आया ॥
सिद्धि गति को प्राप्त वीर ने, अतगड दशा सूत्र के अ ठवे अग।
तीजा वर्ग अष्ट अध्ययन मे, कहा हे जम्बू ? सारा प्रसग ॥

दोहाः-फिर सुधर्मा स्वामी से, कहे जम्बू अणगार।
आठवें अध्ययन का सुना, आप से सब विस्तार ॥
और कृपा करो नाथ जी, दो मुझको बतलाय।
प्रभू वीर ने क्या कहा, नवमें अध्ययन मांय ॥

तर्ज–राधेश्याम

सुधर्मा स्वामी कहे हे जम्बू ? बस उसही काल उस समय मे जाना
नगर द्वारिका विचरत आये, श्री अरिष्ट नेम भगवान ॥
बल देव नाम का राजा जहा, जिनके श्री धारिणी पटरानी।
अत्यन्त सुकोमल सुन्दर वो, रभा ज्यू रूप मे अगवानी ॥
एक रोज सुकोमल शय्या पर, रानी ने सिह स्वप्ना लखकर।
पति के समीप जा स्वय कहा, पुण्यवान जन्म लेगा आकर ॥
गर्भ पूर्ण होने ही स्वप्न सम, पुत्र जन्म उत्तम मानो।
और बाल्य काल आदि का वर्णन, गौतम कुमार के सम जानो ॥
बालक का रखा नाम सुमुख, फिर यौवन अवस्था आने पर।
पचास राज कन्याओ के सग, पाणिग्रहण किया हरपाकर ॥
पचास पचास करोड सोनैया, ससुराल से मिला जिन्हे।
सभी वैभव से परिपूर्ण थे, कभी नही थी कोई इन्हे ॥
जब सुना कि भगवान् आये हे, तो दर्शन को पहुचे उसवार।
वाणी सुन वैराग्य हो गया, झट दीक्षा को अगिकार।
चौदह पूर्व का ज्ञान किया, और बीस बरस की सयम रिद्ध।
शत्रुजय पर्वत पर जाकर, सथारा कर हो गये सिद्ध ॥

उसी द्वारिका नगरी मे, वसुदेव नाम के राजा एक।
उनके धारिणी थी रानी, सुन्दर सुकुमाल सुशीला नेक॥
एक समय सुकोमल शय्या पर, सिंह स्वप्न देख झट उठ आई।
पति देव को सारा हाल कहा, ओर गर्भ पालती सुखदाई॥
गौतम कुमार के समान ही, तेजस्वी पुत्र का जन्म हुआ।
जालि कुमार दिया नाम हर्ष से युवा अवस्था प्राप्त हुआ॥
पचास कन्याओ के सग मे, विवाह कर दिया उस वारी।
पचास पचास करोड सोनैया, मिला डायजे मे भारी॥
एक समय फिर आये वहा पर, श्री अरिष्ट नेमि भगवान।
जालि कुमार गया दर्शन को, वाणी सुन कर पाया ज्ञान॥
माता पिता की आज्ञा लेकर, लिया तुरत ही सयम भार।
बारह अगो का अध्ययन कीना, सौलह वष दीक्षा सुखकार॥
गौतम कुमार के समान ही, फिर एक मास सथारा धर।
जालि कुमार ने सिद्धि पाई, श्री शत्रुजय पर्वत पर॥
दूजे मयालि तीजे उवयालि, पुरूष सेन चौथे अध्ययन।
पाचवें मे श्री वारि सेन, इन सबका है एक ही वर्णन॥
पाचो ही श्री वसुदेव और, धारिणी मा के थे अग जात।
सब ही ने शुद्ध सयम पाला, सिद्धि गति पहुचे सब भ्रात॥
छट्टे अध्ययन मे प्रद्युम्न का, ऐसा ही वर्णन आया है।
श्री कृष्ण के पुत्र हुये थे, मा रूक्मिणी ने जाया है॥
सातवे मे श्री शाम्ब कुवर, इनने काटे कर्मो के जाल।
श्री कृष्ण के पुत्र थे ये, और माता जामवती सुखमाल॥
आठवे मे अनिरुद्ध कुमार, जो प्रद्युम्न के पुत्र हुये।
माता वैदर्भी के नन्दन जो, कर्म काट कर सिद्ध हुये॥
नवमे अध्ययन मे सत्यनेमि, दसवे मे दृढ नेमि जानो।
दोनो के पिता थे समुद्र विजय, और माता शिवा देवी मानो॥

इन दश अध्ययनों का वर्णन, जम्बू! एक समान हो है।
कहे सुधर्मा चौथे वर्ग, वीर प्रभु ने फरमान हो है।

—: पञ्चम वर्ग :—

दोहा:—जम्बू कहे प्रभू सुन ही, दया करी भगवान्।
चौथे वर्ग के आपसे, सुने हैं दस अध्ययन॥
पांचवें वर्ग के भाव अब, दीजे प्रभू फरमाय।
स्वामी सुधर्मा यूं कहे, सुन जम्बू! चितलाय॥

—: तर्ज-राधेश्याम :—

इस पाचवे वर्ग में महावीर ने, दस अध्ययन का कहा अधिकार।
पद्मावती, गौरी, गान्धारी, चौथी लक्ष्मणा है सुखकार॥
सुसीमा, जाम्बवती छट्ठी, और सत्यभामा की सातवीं जान।
रुक्मिणी, मूलश्री नवमी, और दसवीं मूलदत्ता गुणवान॥
जम्बू कहे हे नाथ! कहो अब, पहले अध्ययन का अधिकार।
श्री वीर प्रभू ने जो फरमाया, कहे सुधर्मा अब विस्तार॥
उस ही काल उस समय में जम्बू! द्वारिका नगरी के माय।
राज करे श्री कृष्ण जहां पर, पद्मावती रानी सुखदाय॥
एक समय वहा आये विचरने, श्री अरिष्ट नेमि भगवान।
श्री कृष्ण दर्शन को पहुँचे, और करे प्रभू के गुण गान॥
भगवान् का आगमन सुन करके, हुई हृष्ट तुष्ट पद्मावती नार।
देवकी के सम आई दर्शन को, धार्मिक रथ पर हो असवार॥
भगवान् ने धर्म देशना दी, सुन रहे राजा रानी नरनार॥
परिषद् सुनकर लौट गई, पर बैठे हैं श्री कृष्ण कुमार॥
प्रभू को वन्दन करके कृष्ण जी, एक प्रश्न पूछे यों खास।
देव लोक सम द्वारिका का, किस कारण से होगा विनाश॥

भगवन् कहे श्री कृष्ण ? सुनो, यह बारह योजन लम्बी जान ।
नौ योजन की चौडी द्वारिका, प्रत्यक्ष है देवलोक समान ॥
इसी द्वारिका का विनाश, तुम सुरा सुन्दरी से जानो ।
द्वीपायन ऋषि का क्रोध और अग्नि ही मुख्य कारण मानो ।
भगवन् से भविष्य जानकर कि होगा द्वारिका का सहार ।
वासुदेव श्री कृष्ण के मन मे, हुये ऐसे उत्पन्न विचार ॥
वो जालि, मयालि, उवयालि, आदि महापुरुष धन्य है आज ॥
प्रभू समीप आ दीक्षित हो गये, छोड जगत के सारे साज ॥
मैं अधन्य हू अकृत्य पुण्य जो फसा हुआ हू राज्य मझार ।
अन्त पुर मे मनुष्य सम्बन्धी, काम भोग मे फसा अपार ॥
क्या मैं दीक्षित नही हो सकता, यो हरि ने मन मे विचार किया ।
अपने ज्ञान से अरिष्ट नेमि ने, कृष्ण भावो को जान लिया ॥
श्री कृष्ण को सम्बोधित कर, बोले अरिष्ट नेमि भगवान ॥
यह विचार क्या आये मन मे, जिसका हो रहा आर्तध्यान ॥
तुम सोच रहे हो मन मे कृष्ण, वे जालि मयालि धन्य हुये ।
जो कि सब सम्पत्ति को तज कर, प्रभू के समीप अणगार हुये ॥
मैं अधन्य हू अकृत्य पुण्य, जो विषय भोग मे नित रमता ।
राज काज मे फसा हुआ, क्या मे दीक्षा नही ले सकता ॥
बोलो कृष्ण ! क्या सत्य है ? यह, यही भाव तेरे मन मे आये ।
नही छिपो आप से बात प्रभो !, सर्वज्ञ आा हरि फरमाये ॥
जो कहा आपने सत्य है वो, यही भाव मेरे मन मे आया ।
फिर श्री कृष्ण के भाव को लख, भगवन् ने आगे फरमाया ॥
हे कृष्ण ! सुनो ऐसा तो कभो, न हुआ न होता होवेगा ।
वासुदेव सम्पत्ति तजकर, दीक्षा नही ला, नहीं लेवेगा ॥
तब कृष्ण कहे हे प्रभू बताओ, इसका क्या कारण है नाथ ।
प्रभू कहे हे कृष्ण ? सुनो, हे निदान कृत्य यह सारी बात ॥

वंही 'अमम' नाम के बारहवे तिर्थंकर का पद पाओगे ॥
केवल पर्याय का पालन कर, वर्षो तक सयम ठाओगे ।
अन्त समय हे कृष्ण चन्द्र ! तुम सिद्ध बुद्ध हो जाओगे ॥
यह भविष्य सुन भगवन् मे, श्री कृष्ण अति हृष्ट तुष्ट हुये ।
भुजा ठोकने लगे हर्ष मे, अति जोर २ से शब्द किये ॥
तीन कदम पीछे हटकर, फिर सिहनाद कीना भारी ।
प्रभू वन्दन कर चले, करी, अभिषेक हस्ती की असवारी ॥
नगर द्वारिका बिचो बिच हो, पहुचे अपने महल मझार ।
हस्ति से उतर उपस्थान शाला मे, बैठे सिहासन पर जार ।
पूर्व की ओर मुख कर बैठे, कौटम्बिक जन को बुलवाया ।
देवानु प्रियो ! यह काम करो यू कृष्ण चन्द्र ने फरमाया ॥
द्वारिका के चारो ओर, सब चौराहे और स्थानो पर ।
मेरी एक इस आज्ञा को उद्घोषित करदो झट जाकर ॥
हे देवानु प्रियो ! यह द्वारिका, जो देवलोक सम दिखती है ।
बारह योजन की लम्बी है, नौ योजन चौडी बस्ती है ॥
इसका विनाश होगा देखो, अब सुरा, अग्नि मे जल करके ।
द्वीपायन ऋषि का होगा कोप, नही सशय जानो तिल भरके ॥
इसलिए द्वारिका का कोई, चाहे वो प्राणी नरेन्द्र हो ।
यवराज हो, स्वामी, मत्री हो, राजा का प्रिय पुरेन्द्र हो ॥
छोटे गाव का हो स्वामी, या दो तीन कुटुम्ब का मुखिया हो ।
हो रानी, कु वर या कु वरी हो, कोई सेठ हो, दु खिया, सुखिया हो ॥
जो भी व्यक्ति श्री अरिष्ट नेमि प्रभू पास जा दीक्षा लेते है ।
उनको श्री कृष्ण वासुदेव, दीक्षा की आज्ञा देते है ॥
दीक्षार्थी के पीछे कोइ भी, रोगी, बाल, वृद्ध रहेगे ।
उनके पालन पोषण का भार, श्री कृष्णचन्द्र निज पर लेगे ॥
दीक्षा लेने वालो का दीक्षा, महोत्सव होगा सुखकार ।
अपनी ओर से समारोह का, कृष्ण उठावेगे सब भार ॥

इस आज्ञा की दो तीन बार, सब जगह घोषणा कर आवो।
देवानु प्रियो ? फिर वापिस आ, मेरी आज्ञा को समझावो ॥

दोहा:—राज सेवकों ने चहुं दिशि, उदघोषित किया जाय।
वापिस आदी सूचना, श्री कृष्ण हरषाय ॥
इधर रानी पद्मावती, सुना धर्म सुखदाय।
हृष्ट तुष्ट अति भाव से, प्रभू को यूं दरसाय ॥

तर्ज—राधेश्याम

हे नाम! मेरी श्रद्धा ही पूर्ण, निर्ग्रन्थ वचन पर भारी है।
और सत्य आपकी वाणी है, वह तत्व कहे अनुसारी है॥
इसलिये हुई इच्छा मेरी, श्री कृष्ण से आज्ञा ले आऊ।
श्री चरणो मे आकर भगवन्, मैं अब दीक्षित होना चाऊ॥
प्रभू कहे देवानु प्रिये!, जिसमे सुख हो वही शीघ्र करो।
धर्म कार्य के करने मे, क्षण का प्रमाद भी नही धरो॥
प्रभू को वन्दन कर रानी, फिर धार्मिक रथ पर हुई सवार।
महल पास आ रथ से उतरी, पहुची जहा थे कृष्ण मुरार॥
कर जोड कहे हे नाथ! सुनो, एक अर्ज ध्यान मे लाती हूं।
भगवन् अरिष्ट नेमि के पास, मैं दीक्षित होना चाहती हूँ॥
श्री वासुदेव! दो आज्ञा, मुझे अति हर्ष सहित उपकार धरो।
श्री कृष्ण कहे पदमावती से, जिसमे सुख हो वही शीघ्र करो॥
कौटुम्बिक पुरुषो को बुलवा श्री कृष्ण कहे फिर समझाकर।
पद्मावती के दीक्षा महोत्सव की, करो तयारी झट जाकर॥
विशाल तैय्यारी करके फिर, मुझे सूचना दो लाकर।
सब तरह तैयार करके पूर्ण, सेवक ने बतादी झट आकर॥
इसके बाद पद्मावती को, हरिजी ने पार पाट बिठलाया।

एक सौ आठ स्वर्ण कलशो से, स्नान रानो को करवाया ॥
दीक्षा का अभिषेक किया, और सभी सजाये अलकार ।
पालखी मे वैठाया जिसको, पुरुष उठाते एक हजार ॥
द्वारिका के बीचो बीच हो , रैवतक पर्वत पर आये ।
सहस्नाम वन था जहा पर , बस वही पालखी उतराये ॥
पद्मावती पालखी से उतरी , श्री कृष्ण ने अपने आगे लिया ।
श्री अरिष्ट नेमि के पास फिर, तीन बार आ वन्दन किया ॥
फिर कृष्ण कहे हे प्रभो ! यह मेरी पद्मावती पटरानी है ।
इष्ट, कान्त, प्रिय, मनोज्ञ है, और सुन्दर अति सयानी है ॥
मेरे जीवन मै श्वासोश्वास सम , प्रिये और आन्नद दाता ।
गूलर के फूल ज्यो स्त्री रत्न, ऐसा दुलर्भ ही नजर आता ॥
ऐसी पद्मावती देवी पर , हे नाथ ! आप उपकार धरें ।
शिष्या रुप भिक्षा मेरी , हे नाथ ! आप स्वीकार करें ॥
सुनकर के प्रार्थना हरीजी की , प्रभू ने फरमाया है उस वार ।
हे देवानुप्रिय ? जिसमे सुख हो, वही काम शीघ्र करने मे सार ॥

दोहा:–फिर पद्मावती देवी ने, ईशान कोण में जार ।
अपने हाथ से वस्त्र और, भूषण दिये उतार ॥
पच मुष्टक लोचन किया, केशों का निज हाथ ।
वहां से आ भगवान को, तुरत नमाया माथ ॥

— तर्ज–राधेश्याम —

अरिष्टनेमि को वन्दन कर, पद्मावती बोली उस वारी ।
इस जग मे जन्म, जरा औ,मरण दु,ख को अग्नि जल रही भारी॥
इस दु ख से छटने को स्वामी , मैं दीक्षा करती हुँ स्वीकार ।
कर कृपा प्रर्वजित करे मुझे, प्रभू चरित्र धर्म सुना इसवार ॥

प्रभू ने पद्मावती देवी के, नम्र भाव स्वय प्रव्रजित किया।
और मुण्डित करके तुरन्त वहाँ, यक्षिणी आर्या को सौंप दिया॥
महा सतियों ने प्रव्रजित कर, पद्मावती को अपने संग ली।
संयम क्रिया में सावधान रहने को, फिर हित शिक्षा दी॥
गुरुणी जी की आज्ञानुसार, पद्मावती संयम में चलती।
ईर्या और पाँच समिति युक्त वह, ब्रह्मचर्य पालन करती॥
ग्यारह अंग का अध्ययन कर, तपस्या में तन को लगा दिया।
उपवास से पन्द्रह तक कीने, कई मास लगभग भी पूर्ण किया॥
बीस वर्ष तक पद्मावती, आर्या ने, संयम पालन कर।
एक मास संलेखना की, और साठ भक्त अनशन का धर॥
जिस मोक्ष के हित संयम लीना, उसका ही बस आराधन कर।
अन्तिम श्वास के बाद, सिद्ध पद पाकर वह हो गई अमर॥
यों प्रथम अध्ययन के भावों को, सुधर्मा जी ने बतलाया।
जम्बू सुन कृत कृत्य हुये, और फिर आगे यूं दरसाया॥
वीर वचन सुन श्री मुख से हे प्रभो! बहुत आनन्द आया।
करें कृपा दूसरे अध्ययन में, हे नाथ! कहा क्या फरमाया॥
स्वामी सुधर्मा फिर बोले, हे जम्बू! सुनो लगाकर ध्यान।
वही काल वही नगर द्वारिका, जहाँ रैवतक पर्वत स्थान।
उस पर्वत पै नन्दनवन, उद्यान विशाल मनोहर था।
श्री कृष्ण जहाँ पर राज्य करें, रानी गौरी का प्रियवर था॥
एक समय श्री अरिष्ट नेमि, उस नन्दन वन में आये थे।
भगवन के दर्शन करने, को श्री कृष्ण भी वहाँ पधारे थे॥
दर्शन की प्यासी परिषदा के, मन में अति छाई उमंग थी।
पद्मावती सम गौरी रानी भी, दर्शन करने आई थी॥
धर्म कथा सुनकर प्रभू से फिर जनता लौटी हरषाकर।
वासुदेव श्री कृष्णचन्द्र भी, महलों में पहुँचे आकर॥

पर गौरी रानी ने प्रभू को, सयम की भावना दरसाई।
पद्मावती सम प्रव्रजित हो, निज कर्म काट शिव गति पाई॥

दोहः—गान्धरी, लक्ष्मणा, सुसीमा, जाम्बवती सत्यभाम।
रुक्मिणी आदि कृष्ण की, थी पटरानी तमाम॥
आठो ही पटरानियां, त्यागी सारी रिद्ध।
प्रव्रजित हो एक सम, अन्त हुई सब सिद्ध॥

तर्ज—राधेश्याम

आठो रानी के आठ अध्ययन, इस तरह प्रभू ने फरमाये।
स्वामी सुधर्मा कहे हे जम्बू!, वही भाव यहा दरसाये॥
फिर जम्बू कहे नाथ? कृपाकर, नवमा अध्ययन फरमाओ।
श्री वीर ने क्या फरमाया है, कर कृपा मुझे भी बतलाओ॥
हे जम्बू? था वही काल और उसी द्वारिका नगरी बाहर।
रैवतक पर्वत वही नामी, वही नन्दनवन था सुखकार॥
श्री कृष्ण थे राजा जहा, थी जाम्बवति रानी गुणवर।
शाम्ब कुवार थे पुत्र जिन्हो के, जो सर्वाङ ग से अति सुन्दर॥
उस शाम्ब कुवर की रानी एक, थी मूल श्री अति सुखकारी।
सुन्दर थी और कोमलागी थी, सब ही को इष्ट और प्रियकारी॥
एक समय श्री अरिष्ट नेमि, वहा विचरत विचरत आये थे।
मूल श्री भी गई दर्शन को, श्री कृष्ण भी धाये थे॥
वाणी सुनकर सब लौट गये, पर मूल श्री प्रभू पै आई।
श्री कृष्ण की आज्ञा लेकर के, सयम की भावना दरसाई॥
शाम्ब कुवर ने पहले ही, दीक्षा लेली मन चाई थी।
इसलिये श्वसुर श्री कृष्णचन्द्र की, आज्ञा को दरसाई थी॥
जिसमे सुख हो वही शीघ्र करो, प्रभू ने यो तुरत ही फरमाया।

पद्मावती सम श्री मूल श्री ने, संयम ले शिव पद पाया ॥
शाम्ब कुंवर की एक और, श्री सत्य दत्ता सुन्दरी नारी।
मूल श्री सम संयम ले, उनने करणी मुक्ति प्यारी ॥
इस तरह पांचवे वर्ग के तुम, ये दस अध्ययन पूरे मानो।
जो भाव प्रभू ने दरसाये, हे जम्बू आज वही तुम जानो ॥

— छट्ठा वर्ग —

दोहाः—पंचम वर्ग के भाव सुन, जम्बू अति हरषाय।
छट्ठे वर्ग में क्या कहा, स्वामी सो फरमाय ॥
देख जम्बू की भावना; बोले सुधर्मा स्वाम।
सोलह अध्ययन इसमें कहे जिनके हैं ये नाम ॥

✻ तर्ज—राधेश्याम ✻

मक्काई, किंकम, मुद्गरपाणि, काश्यप, क्षेमक, धृति धर जानो।
कैलाश, हरिचन्दन, वारत्त, सुदर्शन पूर्णभद्र मानो ॥
सुमनभद्र सुप्रतिष्ठित, मेघ अतिमुक्त अलक्ष्य सुजान।
यों सोलह अध्ययन दरसाये, छठ्ठे वर्ग में किया बयान ॥
जम्बू कहे हे नाथ! प्रथम अध्ययन में, क्या वर्णन आया।
श्री सुधर्मा कहे सुनो, श्री वीर ने ऐसा फरमाया ॥
उसी समय उस काल में जम्बू राजगृही नगरी दरम्यान।
श्रेणिक राजा राज्य करे, गुण शीलक नामक था उद्यान ॥
उस नगरी में मक्काई नाम का, गाथा पति रहता था एक।
अन्यों से अपरा भूत था, समृद्धिशाली बहुत ही नेक ॥
उस ही काल उस समय में आये, धर्म आदि करने वाले।
गुण शीलक उद्यान में ठहरे, वीर प्रभू जग उजियाले ॥
भगवान का आगमन सुनकर के, दर्शन को सबका मन पिघला।

भगवती सूत्र मे गगदत्त ज्यू, मकाई दर्शन को निकला ॥
वाणी सुन वैराग्य हुआ, घर बार पुत्र को सभलाया।
हजार पुरुष की शिविका मे वो, वैठ के सयम हित आया ॥
भगवन् के पास मे आकर के, अणगार वन गये मकाई।
अध्ययन किया ग्यारह अङ्गो का, स्थविर जनो मे चित लाई ॥
स्कन्दकजी के समान ही, गुण रत्न, तप, सथारा धार।
सोलह वर्ष दीक्षा पालन कर, विपुल गिरि गये मोक्ष मझार ॥
इसी तरह दूसरे अध्ययन मे, किङ्कम का वर्णन आया।
श्री मकाइ सम दीक्षित हो, विपुल गिरि शिव सुख पाया ॥

दोहाः—अध्ययन सुनकर कहे, श्री जम्बू अणगार।
श्री वीर ने जो कहा, सुना वही अधिकार ॥
अब तीसरे अध्ययन के प्रभू, देवो भाव फरमाय।
स्वामी सुधर्मा यू कहे, सुन जम्बू ! चितलाय ॥

— तर्ज-राधेश्याम —

उस ही काल उस समय मे जम्बू, राजगृही नगरो सुखकार।
गुणशीलक उद्यान जहा पर, राजा श्रेणिक वडे उदार ॥
जिनके थी चेलना महारानी, सुख वैभव सदा वरसता था।
उस ही नगर मे अर्जुन नाम का एक माली भी रहता था ॥
वन्धुमती पत्नि उसके, जो अत्यत ही सुन्दर सुकुमार।
विशाल वगीचा एक था उस, अर्जुनमाली के नगरी बहार ॥
नीले पत्तो से आच्छादिता था, घन घोर घटा ज्यो लगता था।
पाच वर्ण के फुल खिले, लखते ही प्रसन्न मन करता था ॥
उस वगीचे के पास मे ही एक यक्षा यतन अति प्रियकारी।
कुल परम्परा से सब ही जिसकी, सेवा भी करते भारी ॥

वह पूर्णभद्र के समान पुराना, दिव्य, सत्य अति सुन्दर था।
मुदगरपाणि नामक था यक्ष, कर मे एक भारी मुदगर था॥
अर्जुन माली बाल्य काल से, उस यक्ष की सेवा करता था।
एक बेंत की छाबडी लेकर नित नगरी बाहर निकलता था॥
उपवन मे आ फूलो को चुन, वह छाबडी मे भर लेता था।
उसमे से अच्छे श्रेष्ठ फूल चढा यक्ष के देता था॥
दोनो घूटनो को टेक नमे, नित पूजन करता था भारी।
फिर राजमार्ग मे फूल बेचकर, जीवन बिताता सुखकारी॥
उस राजगृही नगरी मे थी, एक ललिता नामा मित्र मण्डली।
अत्यन्त समृद्धि शाली, और, आपस मे अति मिली जुली॥
एक समय राजा का काय कोई, मण्डली ने पूर्ण कर दिया।
राजा ने प्रसन्न होकर तब से, इनको स्वतन्त्र स्वच्छन्द किया॥
इच्छानुसार करते थे काय, नही राज्य दण्ड को पाते थे।
इसलिये बढा साहस उनका, अपनी मनमानी चलाते थे॥

एक समय राजगृही नगरी मे, उत्सव की घोषणा हुई उस बार।
कल खूब होगी फूलो की बिक्री, यो अर्जुन ने किया विचार॥
प्रात काल होते ही पहुँचा, बन्धुमती पत्नि ले सग।
दोनो ही चुन रहे फूल छाबडी मे, थी मन मे अति उमग॥
उस समय उस ललिता गोष्ठी की, छ मित्रो की टोली आई।
मुद्गर पाणि के यक्षायतन मे, क्रीडा कर रहे मन चाई॥
इधर से अर्जुन माली भी, उत्तम फूलो को ले उस बार।
पूजा करने आया यक्ष की, ले अपनी भार्या को लार॥
उन छ ही गोष्ठी पुरुषो ने, फिर इनको देख यू किया विचार।
अर्जुन को लुढकादें बाधकर, और भोगें यह सुन्दर नार॥
इस तरह सोच कर छ ही मित्र, उस द्वार के पीछे आते है।
श्वास रोक निश्चल से हो, चुपचाप खडे हो जाते है॥

दोहाः—बन्धुमती को संग ले, आया यक्ष के धाम।
दोनों घूटने टेक कर, अर्जुन करे प्रणाम॥
मोका देख छहों मित्र ने, किया अर्जुन पे वार।
औंधी मुश्की बांधकर, एक तरफ दिया डार॥

तर्ज–राधेश्याम

फिर अर्जुन के सामने ही, उस बन्धुमती को पकड लिया।
छहो मित्रो ने मिलकर के, उससे मन माना भोग किया॥
बन्धा हुआ होने से अर्जुन, परवश हो रहा था उस बार।
देख देख हो रहा दुखी, और मन मे आया एक विचार॥
इस मुद्गर पाणि यक्ष की मै, बचपन से ही सेवा करता हू।
सब काम बाद मे करता हूँ, पहले आ इसको नमता हूँ॥
सन्देह है ऐसे दुःख मे भी, नही इसका मिला सहारा है।
इससे नही हाजिर यक्ष यहा, यह तो बस काष्ठ का भारा है॥
जब मुद्गर पाणि यक्ष ने जाने, अर्जुन के मन के ये विचार।
तड तड तोड़ दिये सब बन्धन, प्रवेश हुआ अर्जुन मे जार॥
प्रविष्ट यक्ष के होते ही, अर्जुन म वह शक्ति आई।
एक हजार पल के मुदगर को, लिया तुरत हाथो माई॥
बन्धुमति के सहित छ ही, गोष्ठिक पुरूषो को मार दिया।
राजगृही के बाहर सात नित, मनुष्य मरना शुरु किया॥
नगरी मे भय चर्चा फैली, राजा के कानो तक आई।
सेवक पुरूषो को बुला तुरत ही, फिर यह डूडी पिटवाई॥
यक्ष से आविष्ट हो अर्जुन, नित सात व्यक्ति के प्राण हरे।
उसके हाथ से कितने ही, इस नगरी के नरनार मरे॥
इसलिये अगर हो जीवन प्रिय, तो नगरी बाहर मत जावो।

घास, काष्ठ, फल, फूल, और पानी जगल मे मत लाओ।
यदि कोई निकला बाहर तो, तुरन्त ही होगा देह विनाश,
यही घोषणा कर देवानु प्रियो! आवो भट मेरे पास।
राजा की आज्ञा पाकर के, चहुँ दिशि मे घोषणा करवाई,
सूचित किया राजा को वापिस, राज्य पुरुष ने भट आई।
उस राजगृही नगरी मे एक, थे सेठ सुदर्शन गुणधारी,
ऋद्धि सम्पन, अपराभूत, श्रमणोपासक श्रावक भारी।
जीवादिक नव तत्वो के जो, थे ज्ञाता अति बुद्धिमान,
उसही काल उस समय मे आये, विचरत वहा वीर भगवान।
गुणशिलक उद्यान मे ठहरे, जनता सुनकर हरषाई,
राजमार्ग आदि स्थल पर सब, चर्चा करें आपस माई।
जिनका गोत्र श्रवण ही सबको, सदा महाफल दाता है,
फिर दर्शन वाणी सुनने का, पार कहा तक आता है।
लोगो मे यह फैली बात, जब सेठ सुदर्शन ने जानी,
भगवन् के प्रति अनुराग जगा, और दर्शन की मन मे ठानी।
फिर माता पिता के पास मे आये, हाथ जोड कर कहे उसवार,
महावीर भगवान पधारे, गुणशिलक उद्यान मझार।
हे माता! पिता! आज्ञा दो मुझे, दर्शन करने जाऊगा,
वन्दन और नस्कार कर के, मैं प्रभू को शीश नमाऊगा।

दोहाः–माता पिता कहे प्रेम से, सुनो पुत्र एक बात।
नगर बाहर अर्जुन करे, नित जीवों की घात॥
न जाने कोई विपत्ति; आ जावे तत्काल।
अतः यहां से वीर को, वन्दन करलो लाल॥

* तर्ज—राधेश्याम *

सुदर्शन कहे हे मात ! पिता ?, जब भगवन् यहा पधारे है,
यही विराजित है स्वामी, और समवशरण भी धारे हैं।
तब यह कैसे हो सकता यही से वन्दन करू वहा न जाऊ,
इसलिये आज्ञा देदो मुझको, वही जा सेवा करना चाऊ।
अनेक युक्ति से मात पिता ने, बहुत पुत्र को समझाया,
पर ही माना सुदर्शन तब, अनिच्छा से यू फरमाया।
जिसमे सुख हो वैसा ही करो, यह आज्ञा सुदर्शन ने पाकर,
स्नान किया शुद्ध वस्त्र धार, वो चला दर्शन को हरषा कर।
राजगृही के बीचो बीच हो, पैदल पैदल जा रहे थ,
यक्षायतन के आस पास हो, गुणशिलक मे आ रहे थे।
यक्ष मे आविष्ट अर्जुन ने, जब देखा सुदर्शन को उसवार,
मुद्गर घुमाता आया सेठ ढिग, तन मे छाया क्रोध अपार।
अपनी ही तरफ आता है यक्ष, यह सुदर्शन ने देख लिया,
पर नही हुये भयभीत जरा न त्रास, क्षोभ, उद्वेग किया।
सम्भ्रान्त और विचलित न हुये, निभय हो वस्त्र का अचल धर,
भूमिका प्रमाजन कान, मुख पर उत्तरासग धारण कर।
पूर्व दिशा को मुख कर के, बाये घुटने को ऊचा लिया,
हाथ जोड कर मस्तक पर अजलि पुट रख य ध्यान किया।
नमस्कार अरिहन्तो को जिन मोक्ष मे डेरे कर डाले,
और नमस्कार महावीर को हो, जो मोक्ष मे हैं जाने वाले।
जिन से पहले ही लिये हुये, मैं पाच अणुव्रत पालता हूं,
उन महावीर की साक्षी से, यावज्जीवन व्रत ये धारता हू।
प्राणातिपात, मृषा, अदत्त, मैथुन, परिग्रह आदि सताप,
क्रोध, मान माया और लोभ, मिथ्या आदि अठारह पाप।
अशन, पान, खादिम, स्वादिम, यावज्जीवन त्यागू चारो आहार,

मरण पाऊं तो त्याग मेरे और बच जाऊं तो सब आगार।
इस तरह से उपसर्ग आने पर, सागारी अनशन धार लिया,
मन मे निश्चय करके बैठे, प्रभू के चरणो का ध्यान किया।
इसके बाद अर्जुन माली, एक हजार पल के मुद्गर को,
आया घुमाता हुआ सेठ पर हाथ उठाया ऊपर को।
सुदर्शन श्रमणोपासक का, लख तेज यक्ष हो गया मुरदार.
खूब घुमाया मुद्गर उसने पर न हुआ उन पर कोई वार।
लाचार हो सन्मुख खडा हुआ, अनिमेष दृष्टि से देख रहा,
अपना मुद्गर ले भागा यक्ष, जिस दिशा से आया उधर गाह।
मुद्गर पाणी के जाते ही, अर्जुन अति अशक्ति पाता,
एक "धम" शब्द के साथ वही, वह उन पृथ्वी पर गिर जाता।
जब सेठ सुदर्शन ने जाना, उपसर्ग दूर हो गया यहा,
प्रतिज्ञा पाल फिर अर्जुन को सचेष्ट करने लगे वहा।
स्वास्थ्य लाभ पाते ही देखा, सेठ जी होश मे ला रहे है,
अर्जुन पूछे देवानु प्रिय!, हो कौन! आप कहा जा रहे है?।
सुदर्शन श्रमणोपासक हूं, जीवादि तत्वो का ज्ञाता,
गुणशिलक बाग मे आये प्रभू, मैं वन्दन करने को जाता।

दोहाः-अर्जुन कहे देवानु प्रिय!, मैं भी करूंगा दर्श।
पर्युपासना कर मुझे, होगा अत्यन्त हर्ष॥
जिसमे सुख हो वही करो, आओ मेरे सङ्ग।
सुदर्शन सङ्ग चल रहा, अर्जुन धरि उमङ्ग॥

तर्ज-राधेश्याम

गुणशिलक उद्यान मे आ, फिर दोनों प्रभू पास आये,
तीन बार आक्षिण प्रदक्षिण, वन्दन करके हरषाये।

भगवन् महावीर ने दोनो को, फिर धर्म कथा वहा फरमाई,
सुदर्शन सुनकर चले गये, वापिस अपने घर के ताई।
अर्जुन ने धर्म कथा सुनके, अपने हृदय धारण की,
हृष्ट तुष्ट हृदय से प्रभू को, मनकी बात उच्चारण की।
हे प्रभो ? आपके वचनो पर मै श्रद्धा, रूचि करता हू,
निर्ग्रन्थो के प्रवचना पर, मैं पूरी आस्था धरता हू।
इसलिये आपके पास मे हो, दीक्षित मे करलू मन चाया,
देवानु प्रिय। जिसमे सुख हो वही करो प्रभू ने फरमाया।
भगवन् के वचन सुनकर अर्जुन, ईशान कोण में जा उसवार,
पच मुष्टि कर लोच स्वय, अब अर्जुन बन गये है अणगार।
प्रव्रजित हुये जिस दिन अर्जुन, उसही दिन, प्रभू को अर्ज किया,
वन्दन और नमस्कार करके, फिर ऐसा अभिग्रह धार लिया।
हे भगवन्! मैं यावज्जीवन तक, वेले, वेले का पारणा कर,
आत्मा को लगा तप मैं विचरू, नही इसमे कभी होगा अन्तर।
यो अभिग्रह को धारण कर अब, विचर रहे अर्जुन अणगार,
वेले के पारणे प्रथम पहर मे, स्वाध्याय कीना सुखकार।
दूसरे पहर मे ध्यान किया, और तीसवे पहर मे पात्र सभार
गौतम के सम चले गोचरी राजगृही नगरी मझार।
ऊच, नीच, मध्यम कुल मे, सामुदानिक भिक्षा हितकार,
नगर निवासी देख रहे है, फिरते हुये अर्जुन अणगार।
स्त्री, पुरुष, बच्चे, बूढे, सब लोगो ने पहचान लिया,
अर्जुन को देख कर के सबने, वहा पर यू कहना शुरू किया।
इसने मेरे पिता को मारा, इसने ही मेरी माता को,
इसने ही मेरी बहन को मारा, इसने ही मेरे भ्राता को।
कोई कहे पत्नि को मारा, कोई कहे मम सुत प्यारा,
कोई कहे पुत्री, पुत्र वधु, मेरे सम्बन्धी को मारा।

इस तरह कटु वचनों से सब अर्जुन का तिरस्कार करते,
निन्दा करते, दोषी कहते मार ईंट, लाठी, पत्थर देते।

दोहा:—स्त्री पुरुष बच्चे तरुण, वृद्ध उड़ावे धूल।
अर्जुन सहे समभाव से, द्वेष न लावें मूल॥
सहन किये परिषह सभी, क्षमा भाव उर धार।
निर्वेग मैत्री भाव से, मध्यस्थ भाव विचार॥

तर्ज—राधेश्याम

यह सामुदायिक भिक्षा हित, ऊंच, नीच, मध्यम कुल जा,
रूखा सूखा जो शुद्ध मिलता, वही पा लेते अर्जुन वा।
कहीं आहार मिल जाता तो, कहीं पानी नहीं मिल पाता था,
पानी मिल जाता आहार नहीं, इस तरह का उपसर्ग आता था।
अविमन, अकलुष, अक्षोभित, विषाद भाव को दूर निवार
तन मनादि विक्षेप न लाते, जो मिलता करते स्वीकार।
आहार ले राजगृही से चल, गुणशील उद्यान में आते थे,
भगवान् महावीर स्वामी को, जो लाया आहार दिखाते थे।
प्रभु आज्ञा पा करते ग्रहण, गृद्धपन हर्ष रहित हो धार,
जिस तरह सर्प बिल में जाता, समभाव से करते संयम सार।
गुणशील उद्यान से चल, जनपद में विचरे श्री भगवान,
इन महाभाग अर्जुन ने भी, जो पाया प्रभु से संयम दान।
उसका निज उत्कृष्ट भावों से, पालन कीना हो अति उदार,
प्रभाव शाली, विपुल और उग्र प्रधान तप में रमे अपार।
छह महीने तक संयम पाला, फिर अर्द्ध मास संलेखना कर,
तीस भक्त का छेदन होता, अर्जुन मुनि ने अनशन धर।
जिस कार्य के लिए संयम लीना, उसको उन्होंने सिद्ध किया,
घनघाती तोड़ अनन्त गुणों को, ज्ञान प्राप्त कर मोक्ष लिया।

यो तीसरा अध्ययन पूर्ण हुआ, जम्बू स्वामी सुन हरषाये,
फिर कहे सुधर्मा स्वामी से, प्रभू चौथा अध्ययन फरयाये।
उस ही काल उस समय मे जम्बू ? राजगृही नगरी दरम्यान,
गुण शिलक उद्यान जहाँ पर, राजा श्रेणिक थे गुणवान।
'काश्यप' नाम का गाथापति, एक रहता था उस नगर मझार,
'मह्वाइ' गाथापति सम उसने, प्रभू पास लिया सयम भार।
सोलह वर्ष तक श्रमण धर्म का, उसने पालन कर सुखकार,
अन्त समय मैं विपुल गिरी पर, सिद्ध हो पहुँचा मोक्ष मझार।
अब आगे पचम अध्ययन जम्बू। 'क्षेमक' गाथा पति का जान,
काकन्दी नगरी के वासी, दीक्षा लेकर किया कल्याण,
छट्ठे मे काकन्दी के ही 'घृतिधर' गाथा पति का है हाल।
सातवे मे साकत नगर के 'कैलाश' गाथापति सुखमाल,
आठवे अध्ययन मै गाथापति 'हरिचन्दन' का वर्णन आया।
साकेत नगर के रहने वाले कर्म काट किया मन चाया,
राजगृह के 'वर वत्तक' का, नवमा अध्ययन तुम जाना।
बारह वष का सयम पाला, विपुलगिरि पर सिद्ध मानो,
दसवे मे है वाणिज्य ग्राम के, बाहर द्यु्तिपलश उद्यान।
पाच वर्ष का सयम पाल, कर लिया सुदशन' ने कल्याण,
गाथापति पूर्णभद्र' का वणन, ग्यारहव अध्ययन मे आया।
प्रभू पास मे सयम लेकर, अन्त समय शिव पद पाया,
बारहवे मे श्राम्वती नगरी के, 'सुमनचन्द्र' गाथापति जान।
इसी नगर के 'सुप्रतिष्ठ' का, तेरहवा अध्ययन लो तुम मान।
चौदहव अध्ययन मै जम्बू ?, हुये गाथापति मेघ' सुखकार।
दीक्षा लेकर सयम पाला, विपुल गिरि गये मोक्ष पधार,
इस प्रकार सहु गाथापति ने, प्रभू पास ले सयम भार।
चारित्र धम का पालन करके, विपुल गिरि गये मोक्ष सिधार।

दोहाः—चौदहवें अध्ययन को सुना, जम्बू ने धर ध्यान।
कर जोड़ी फिर विनवे, सुनिये कृपा निधान !॥
पन्द्रहवें अध्ययन का, प्रभू फरमाओ भाव।
श्री वीर ने जो कहा, है सुनने का चाव॥

तर्ज–राधेश्याम

उस ही काल उस समय मे जम्बू ?, पोलासपुरी नगरी मझार,
'श्री वन उद्यान जहा पर, राजा 'विजय' अति सुखकार।
रानी थी ' श्री देवी' जिनके, रूपवती सुन्दर सुखमाल,
आत्मजात अति धीर वीर था, 'अतिमुक्तक' जिनके एक लाल।
उसी समय महावीर प्रभू, श्रीवन उद्यान मे आये थे,
ज्येष्ठ, श्रेष्ठ, अतेवासी, सग में गौतम मन भाये थे।
भगवन् को पूछ भिक्षा के हित, भगवती सूत्र वर्णन अनुसार,
पोलासपुर के ऊच, निच, मध्यम कुल मे जा रहे अणगार।
इसी समय कुवर अतिमुक्तक, स्नान कर सज अलकार,
अपने बाल बालिकाओ सग, क्रीडा स्थल पर खेले जार।
उसी समय भिक्षा हित जा रहे, इसी स्थान के होकर पास,
श्री गौतम को देख कुवर ने, समीप आ यू की अरदास।
अतिमुक्तक कहे हे भगवन।, है आप कौन यह बतलाओ,
किस कारण मे घूम रहे हैं, मुझे कृपा कर समझावो।
गोतम कहे देवानु प्रिय।, तुम हमे श्रमण निग्रन्थ जानो,
पाच समिति युक्त हमे अब, पूर्ण ब्रह्मचारी मानो।
ऊच, नीच, मध्यम कुल मे, भिक्षा के हित हम फिरते हैं,
गृह सामुदानिक भिक्षा पा, उस ही की गोचरी करते हैं।
अतिमुक्तक कहे हे भगवन् ? फिर मेरे साथ चलिये इस वार,

मै भिक्षा दिलवाऊ आपको, यू कह हुये गोतम के लार।
अगुली पकडी गौतम जी की, लाये अपने घर के द्वार,
श्री देवी ने देख प्रसन्न हो आगे आ कीना सत्कार।
सात-आठ आ कदम सामने, विधि वत् वन्दन किया अयवार,
उच्च भाव आदर से मुनि को, चारो तरह का दिया आहार।
अशन, पान, खादिम और स्वादिम, देके आवश्यकतानुसार,
मुनिवर को पहुँचाने आई, वापिस अपने भवन द्वार।
फिर अतिमुक्तक कहे गौतम से, प्रभू आप कहा रहते हैं,
श्री गौतम स्वामी यू कुमार को, अपना परिचय देते है।
धर्माचार्य और धर्मोपदेशक, मोक्ष मार्ग के जो कामी,
धम आदि के करने वाले, मेरे गुरू महावीर स्वामी।
पोलासपुरी नगरी के बहार, श्री वन उद्यान मे है इसवार,
कल्पानुसार अवग्रह ले करते, तप सयम से आतम उद्धार।
मै भी वहो पर हे अतिमुक्तक। उन्ही के पास मे रहता हूँ,
अतिमुक्तक कहे क्या मै भी वहा, दशन को चल सकता हुँ।
देवानुप्रिय। जिसमे सुख हो, वही करो यू गोतम जी ने कहा,
अतिमुक्तक पहुँचे सग-सग, भगवन् विराज रहे थे जहा।
विधि पूर्वक वन्दन कर, फिर उपासना मे चित लाया,
गौतम स्वामी ने प्रभू पास आ, आहार पानी दिखलाया।
फिर आहार पानी कर गौतमजी,ने आत्म भावो मे किया विहार,
ऊधर सुनी है धर्म कथा को, प्रभू पास अतिमुक्तक कुमार,
धर्म कथा सुन हृष्ट तुष्ट हो, अतिमुक्तक ने की अरदास,
माता पिता की आज्ञा ले, दीक्षा लेऊगा आपके पास।
जिममें सुख हो वैसा ही करो मत धर्म कार्य मे करो प्रमाद,
प्रभू ने यू फरमाया उसे, अतिमुक्तक ने भी रखा याद।

दोहा:—मात पिता के पास आ, बोले यूं नरनाथ।
दर्श किये प्रभु वीर के, वाणी सुनी हितकार॥
आज्ञा दो अब मुझे, लूंगा संयम भार।
जिन मंदिर यूं विनवे, अतिमुक्त कुमार॥

तर्ज-राधेश्याम

सुनकर यों मात पिता बोले, हे पुत्र! अभी तुम बच्चे हो,
बातों का ज्ञान नहीं कुछ भी, और धर्म ज्ञान में कच्चे हो।
सुनकर कहे कुं 'जिसे जानता' उसको नहीं जानता हूं,
'जिसे नहीं जानता हूं', है मात उसे मैं जानता हूं।
माता पिता कहें यह क्या? इसका क्या है अभिप्राय,
जिसे न जानूं उसे जानता, जिसे जानूं सो जानूं नाय।
कुंवर कहे सुन मात पिता के, अतिमुक्त बोले समझाय,
मैं जानूं जो जन्मा जग में उसे अवश्य ही जाय।
पर यह नहीं जानूं कौन वार में जाना कहां किस प्रकार,
किस जगह के बाद मरूं मैं, इसका नहीं पता इकसार।
दूजी बात यह भी नहीं जानूं, किन कर्मों का फल पाकर,
नरक, मनुष्य तिर्यंच, स्वर्ग में, जाना जिव उत्पन्न आकर।
पर उत्पन्न जाकर जानूं कि जीव, स्वयं कर्मों का फल पाकर,
इसी बात पाति नहीं मैं, उत्पन्न होता है आकर।
हे मात पिता! इसी से मैं कहता, नहीं जानता उसको जानता हूं,
पर जिसे मैं जानता हूं, उसको नहीं जानता हूं।
हे मात पिता! आज्ञा दो मुझे, मैं भी अब संयम लेता हूं,
श्री महावीर स्वाम के पास में, दीक्षा लेना चाहता हूं।
इसके बाद भी मात पिता ने, बहुत युक्ति से समझाया,

पर सयम के दृढ भाव से, कुवर न विचलित हो पाया।
विवश हो बोले मात पिता, एक मन की बात हम दरसाते,
एक दिवस के लिये हो तेरी, राज्य श्री देखना चाहते।
रहे कुवर तब मौन, हप फिर, मात पिता के दिल छाया,
और महाबल के समान ही, राज्यभिषेक भी करवाया।
इसके बाद श्री अतिमुक्तक ने, प्रभू पास दीक्षा धारी,
सामाजिक ग्यारह अग लखे, और वर्षो-साधना की भारी।
गुण रत्न सवत्सर तप करके, और अन्त समय सथारा कर,
फिर सिद्ध बुद्ध और मुक्त हुये, श्रीअतिमुक्तक विपुल गिरिपर।
यह पन्द्रहवा अध्ययन पूण हुआ, कहे स्वामी सुधर्माजी उसबार,
जम्बू कहे हे नाथ ! कहो अब, सोलहवे अध्ययन का अधिकार।
उस हो काल उस समय मे जम्बू, वाणारसो नगरो मझार,
'काम महावन' उद्यान था जहा, 'अलक्ष' राजा थे सुखकार।
एक समय महावोर प्रभू, फिर उस उद्यान मे आये थे,
कोणिक सम राजा अलक्ष भी, दर्शन के लिये पठाये थे।
आ वन्दन नमस्कार कीना, और सेवा करते सुखदाई,
जनता और राजा सभी को प्रभू ने धर्म कथा फिर फरमाई।
वाणी सुन वैराग्य हुआ, राजा अलक्ष ने तज ससार,
'उदायन' राजा समान ही, प्रभू पास लिया सयम भार।
दिया राज्य भानजे को अपने, राजा उदायन ने जानो,
ज्येष्ठ पुत्र ो दिया अलक्ष ने, इतना ही अन्तर मानो।
ग्यारह अगो का अध्यकन कर, और बहुत वर्ष चारित्र पाल,
विपुल गिरि पर सिद्ध बुद्ध हो, अलक्ष मुनि हो गये निहाल।
यो सोलहवा अध्ययन फरमाया, हुआ छठ्ठा वर्ग पूर्ण सारा,
स्वामी सुधर्मा, कहे जम्बू ! से, प्रभू ने कहा सो कह डारा।

—: वर्ग सातवां :—

दोहा—जम्बू सुन हर्षित हुये, श्रद्धा वर्ग-तमाम।
श्री सुधर्मा स्वामी से बोले करि प्रणाम ॥
वर्ग सातवें मे प्रभू! क्या फरमाया वीर।
सुधर्मा कहे प्रेम से, सुण जम्बू! गुणधीर ॥

—: तर्ज-राधेश्याम :—

नन्दा, नन्दवति, नन्दोत्तरा, नन्द श्रेणिका, मरुता जान,
सुमरुता और महामरुता, महादेवा, भद्रा गुणवान।
सुभद्रा और सुजाता जानो, सुमनानिका, मूलदत्ता,
श्रेणिक राजा की सब रानी, अध्ययन तेरह दिये बता।
जम्बू कहे कर कृपा नाथ! अब, पहला अध्ययन देवो बताय,
स्वामी सुधर्मा कहे हे जम्बू! उस ही काल उस समय के मॉय।
राजगृही नगरी सुन्दर, और गुणशिलक नामा उद्यान,
श्रेणिक राजा राज्य करे जहा, रानी नन्दा अति गुणवान।
एक समय श्री वीर पधारे, परिषद् चली दर्शन करताय,
सुना आगमन हृष्ट तुष्ट हो, महारानी नन्दा हरषाय।
सेवक को आज्ञा दी यो सजाकर, धार्मिक रथ लावो जाई,
पद्मावती रानी सम नन्दा भी, प्रभू दर्शन के हित आई।
प्रभू ने धर्म कथा फरमाई, रानी को चढ गया वैराग,
श्रेणिक राजा की ले आज्ञा, दीक्षा ली सब सुख को त्याग।
ग्यारह अग का अध्ययन कीना, बीस व चारित्र पर्याय,
अन्त समय मे रानी नन्दा, मोक्ष पुरी में पहुची जाय।
इसी तरह से हे जम्बू! तुम नन्दवति आदि जानो,
शेष बारह रानियो के, बारह ही अध्ययन मानो।

सब हो ने समार छोडकर , सयम ले कीना उद्धार ,,
वर्ग सात का वीर प्रभू ने, यू फरमाया है अधिकार।

— आठवां वर्ग —

दोहा–जम्बू कहे कर जोड के, सुनिये स्वामी नाथ।
अन्तकृत दशा का आठवां, अंग जो है विख्यात ॥
उसमें सातवे वर्ग के, भाव सुने चित लाय।
आगे आठवें वर्ग के , दीजे भाव फरमाय ॥
हे आयुष्मान जम्बू ! सुनो, बोले सुधर्मा स्वाम।
अंग मे आठ यू कहे, दस अध्ययन के नाम ॥

तर्ज–राधेश्याम

काली, सुकाली, महाकाला और कृष्णा, सुकृष्णा जान,
महा कृष्णा,श्री वीर कृष्णा, और रामकृष्णा थी अति गुणवान।
पितृसेन कृष्णा नवमी, और महासेन कृष्णा जानो,
इन दसो रानी के दस अध्यन, इस वर्ग आठवे मे मानो।
जम्बू कहे हे नाथ! प्रथम, अध्ययन के भाव दीजे फरमाय,
स्वामी सुधर्मा कहे हे जम्बू।, सुनो प्रथम अध्ययन चितलाय।
उस ही काल उस समय मैं जम्बू! चम्पा नामक नगर सिरे,
पूर्ण भद्र उद्यान जहा पर, कोणिक राजा राज्य करे।
श्रेणिक राजा की रानी, कोणिक की लघुमाता काली,
रानी नन्दा ज्यू प्रभू पास मैं, इसने भी दीक्षा पाली।
सामायिक आदि ग्यारह अग का , फिर अध्ययन कीना उसवार,
उपवास, बेला, तेला आदि का , तप करके विचरे सुखकार।

एक समय वह काली आर्या, श्री चदनवाला के पास,
हाथ जोड कर विनय पूर्वक, आकर यू कोनी अरदास।
रत्नावली तप करना चाहूँ, हे पूज्य! आपकी आज्ञा लेर,
जिसमे सुख हो वही शीघ्र करो, नही धर्म कार्य मे करना देर।

चन्दनवाला महासती की य आज्ञा पाकर उसमार,
काली आर्या ने यू कीना, फिर रत्नावली तप सुखकार।
पहले उपवास किया उसने, फिर किया पारणा वगय मभार,

फिर तेला कर किया पारणा, फिर तेला कर लिया आहार।
आठ वेले फिर किये निरन्तर, पारणा कर किना उपवास,
पारणा कर किया वेला तेला, जो सोलह तक चढ गई खास।
फिर सोलह का पारणा करके, चौवीस वेले कीने साथ,
अन्तिम वेले पारणा कर के, फिर सोलह पच्चखे धन्य मात।
इस प्रकार पन्द्रह चौदह कर, एकोपवा तक पहुँची जार,

उपवास का पारणा कर के फिर आठ वेले किये लगातार।
पारणा करके तेला कीना, फिर वेला कर किया उपवास,
इस प्रकार रत्नावलि तप की, एक परिपाटी हुई है खास।
इस एक लडी की आराधना, रत्नावलि तप मे सोहती है,
एक वर्ष और तीन महीना वाईस दिन की होती है।

तीन सो चौरासी दिन तप के, अठ्यासी दिन का पारणा जान,
चार सौ वहत्तर दिन का सारा, यू इसमे होता है निदान।

इस तरह से काली आर्या ने, पहली परिपाटी पूर्ण कर,
दूसरी परिपाटी प्रारम्भ की, फिर उसी तरह से तपस्या धर।

उतने ही दिन की तपस्या, उतने ही दि पारणा जानो,
पाच विगय का त्याग पारणो मे, विशेषतः यह मानो।
इसी तरह से तीसरी परिपाटी में, इतनी ही तपस्या धर

और पारणे मे विगय के, लेप मात्र का त्यागन कर।
पूर्ण कीनी महासती ने, तीसरी परिपाटी सुखकार,
दूध, दही, घी तेल और मीठा, पांच विगय यह दिये निवार।
चौथी परिपाटी को भी की, फिर इसी तरह तपस्या घर के,
सभी पारणे पूर्ण कीने, आयबिल का व्रत कर के।
इस प्रकार रत्नावली तप की, चारो परिपाटी सुखकार,
पूर्ण कीनी पाच बर्ष दो मास, अट्ठाईस दिवस मझार।
'रत्नावली तप' कर पूर्ण हुए से, काली आर्याजी उसवार,
चन्दनबाला जी के पास आ, कीना वन्दन नमस्कार।
फिर उपवास बेला और तेला, आदि तपस्याये नित कर,
आत्मा को भावित करती, काली आर्या रही विचर।
इस तरह प्रधान तप करने से, काली आर्या जी का शरीर,
मास, लोही से रहीत हो गया, दिखने लगी नाडिया फिर।
अस्थि पजर देह हो गई, कड-कड हड्डियाँ करती आज,
सूखे काष्ट, कोयले, पत्तो की, भरी गाडी ज्यो करे आवाज।
मास, लोही के न होने से, यद्यपि रूक्षता अधिक बढ़ी,
पर भस्म से आच्छादित अग्नि सम, तप से तेज की शोभा चढी।
एक समय उस काली आर्या, के हृदय मे पिछली रात,
स्कन्दक के समान मन मे, उत्पन्न हुई अचानक बात।
तपस्या के कारण यह मेरा, अत्यन्त कृश हो गया शरीर,
इसलिये उचित है आज मुझे, यो सोचे मन मैं हो गम्भीर।
जब तक मुझ मे उत्थान कर्म, बल, वीर्य और पुरूषाकार,
श्रद्धा, पराक्रम धृत और सवेग, आदि का है आधार।
तब तक मुझ को उचित है कि, सलेखना भूषणालू स्वीकार,
सूर्योदय होते ही कल, श्री चन्दनबाला से पूछ जार,
उन्ही की आज्ञा लेकर फिर, सलेखना भूषण सेवित करू,

भक्त पान का प्रत्याख्यान कर, मृत्यु न चाहती हुई विचरे।
सूर्योदय होते ही तुरत, आई चन्दन बाला सति पास,
वन्दन नमस्कार कीना फिर, हाथ जोड यूं की अरदास।
हे आर्ये! सलेखना भूषण की, मुझको दे आज्ञा कृपा धरो,
चन्दना बोली देवानु प्रिये!, जिसमे सुख हो वैसा ही करो।
धर्म कार्य मे देर न हो, यू चन्दना की आज्ञा पाके,
तुरत ही उस काली आर्या ने, सलेखना की हरषा के।
सामायिकि आदि ग्यारह ही, अगो का अध्ययन करके खास,
आठ वर्ष का सयम पाला, महामति चन्दना के पास।
अन्त मे महासती काली ने, एक मास सलेखना धर,
आत्माकर सेवित अनशन से, साठ भक्तो का छेदन कर।
जिस अर्थ हित सयम लीना, फिर अन्तिम उच्छ्वासो के साथ,
उसे प्राप्त कर लिया सति ने, सिद्ध गति मे पहुंची जाय।

दोहा:-प्रथम अध्ययन पूर्ण हुआ, जम्बू सुन हरषाय।
फिर कर जोडी बोलवे, करो कृपा गुरुराय॥
आठवें वर्गका दूसरा, अध्ययन दो फरमाय।
सुधर्मा स्वामी कहे, सुन जम्बू! चित्त लाय॥

—: तर्ज-राधेश्याम :—

उस ही काल उस समय मे जम्बू!, चम्पा नामा नगरी जान।
पूर्णभद्र था चैत्य जहा पर, कोणिक राजा थे गुणवान,
श्रेणिक राजा की थी पत्नि, और कोणिक की छोटी मात।
सुकाली रानी गुणवती, जिसका यह वर्णन सुखदान,
काली रानी के सम इसने भी सयम वृत को धारण कर।
उपवास, बेला, तेला आदि, तपस्या करके रही विचर,

एक समय सुकाली आर्या, ग. चन्दनवाला के पास;
वन्दन नमस्कार कर के फिर हाथ जोड यू की अरदास।
'कनकावलि' तप करना चाहूँ, हे महाभाग ? दया धरो,
चन्दनवाला जा कहे तुम्हे, जिसमे सुख हो वही शाघ्र करो।
इसके बाद सुकाली सति ने, कनकावलि तप किया सुमन,
जिस प्रकार कालो रानो के रतनावलि तप का है वर्णन।
'रतनावलि' कनकावलि' तप मे, बस इतना ही अन्तर जानो,
आठ आठ चोनोस जहा वेले, वहा यहा पर तेले मानो।
रतनावलि मे वेले होते, और कनकावली मे तेले जान,
एक वप और पाच महिने, वारह दिन का है निदान।
इस.ी एक परिपाटी, मे अठ्ठयासी दिन पारणे आते,
एक वर्ष और दो महिने, चऊदह दिन तपस्या मे जाते।
इसकी भा चार परिपाटी होती, उसे जो पूरा करते है,
तो पुरे पाच वर्ष नो महिने दिन अठारह लगते है।
महामति श्री सुकाली ने, चारो परिपाटी पूर्ण की,
और शेप वणन जानो सव, काली आर्या के सम ही।
नौ वर्ष शुद्ध सयम पाला, अन्त समय गई मुक्तिधाम,
दूसरे अध्ययन का हे जम्बू ?, तुझे ये वर्णन कहा तमाम।
जम्बू कहे हे नाथ! वताओ, तीसरे अध्ययन का अधिकार,
महाकाली रानो का वर्णन, सुन जम्बू ? अब ध्यान लगाकर।
कोणिक भी छोटी माता थी, और श्र णिक राजा की वह नार,
सुकालो रानी के सम ही, इसने भी लिया सयम भार।
'लधुसिह' निष्क्रीडित' तप का, इसने आराधन कीना,
किस प्रकार होता है तप ये, सुन वर्णन तू रग भीना।
सर्व प्रथम उपवास किया, फिर पारणा विगय सहित उपवास,
विगयो का सेवन नही वर्जित, पहली परिपाटी मझार।

लघुसिह और महासिह तप मे , बस इतना ही अन्तर जानो।
नौ तक चढते लघुसिह मे , सोलह तक महासिह मे मानो ,
सर्व प्रथम उपवास किया , फिर पारणा कर बेना ठाया।
करके पारणा वापिस उसके , फिर उपवास का व्रत या ,
फिर तेला बेला, चोला तेला पाच चार छ पाच को धार।
सात के बाद किये छ. उसने , आठ सात नौ आठ विचार ,
यो एक आगे एक पीछे करते , सोलह तक पहुची है जार।
सोलह के बाद फिर पन्द्रह कीने , पुन किये सोलह उमवार ,
सोलह, चऊदह, पन्द्रह, तेरह , फिर चऊदह फिर बारह जान।
तेरह ग्यारह, बारह से दस , इस तरह एक का अन्तर मान ,
यो क्रम से आये तेले तक, करके पा णा किया उपवास।
बेला कर उपवास किया , फिर , यू परिपाटी हुई खलास ,
एक वर्ष छ महिने और, अठारह दिन का है प्रमान।
इकसठ दिन के हुये पारणे, बाकी सब तपस्या के जान ,
इसका भी चार पारिपाटी पूर्ण , की कृष्ण आर्या जी हरपाय।
छ वर्ष दो मास लगे , ऊपर बारह दिन जिसके माय ,
महासिह निष्कीडित' तप को , विधि पूर्वक कर उसवार।
अन्त समय संथारा कीना , कृष्णा पहुँचो मोक्ष मँझार
अब पाचवे अध्ययन मे जम्बू ! सुकृष्णा का वर्णन आता।
श्रेणिक राजा की रानो थी , वो कोणिक को लघु माता ,
इसने भी प्रभू की वाणी सुन दीक्षा ली श्री चन्दना पास।
फिर 'सप्त सप्तमिका' भिक्षु पडिमा की आज्ञा भी ली है खास ,
इस तप की आराधना पुर्ण , सात सप्ताह मे हो जाता।
प्रथम सप्ताह मे एक-एक दत्ति , अन्न पानी की ली जाती ,
दूसरे सप्ताह दो दो दत्ति , ताजे मे तीन तीन ाना।
चौथे मे है चार चार , पचम मे पाच पाच मानो ,

छट्ठे मे भी छ छ दत्ति, यों गृहस्थ के घर से ले आते,
सात अन्न की सात पानी की, सातवें सप्ताह में लाते
उन पचास दिन की यह तपस्या, 'सप्त सप्तमिका' कहलाती,
इसमें एक सौ छियानवे कुल, भिक्षा की दत्तियां आती।
यह तप करके सुकृष्णा सति, फिर चन्दनबाला पे जाती,
'अष्ट अष्टमिका' भिक्ष पडिमा तप की भावना दरसाती।
महासती चन्दना जी बोली, देवानु प्रिये! जिसमें सुख हो,
वही कार्य करो तुम जल्दि से और धर्म कार्य में देर न हो।
य आज्ञा ले सुकृष्णा ने, 'अष्ट अष्टमिका' तप कीना,
प्रथम आठ दिवस में रोज एक, दत्ति अन्नपानी लीना।
दूजे अष्टक में दो दो दात, इस प्रकार आठ अष्टक कीने,
आठवें अष्टक मे अन्न पाना, आठ आठ दत्ति लीने।
चौसठ दिन मान मे पूर्ण हुआ, यह 'अष्ट अष्टमिका तप उनकार,
दो सौ अठयासी दात मे लीना, जिसमें पानी और आहार।
सूत्रानुसार विधी पूर्ण कर, फिर आई चन्दन बाला पास,
'नव नवमिका' भिक्षपडिमा की, आज्ञा लीनी धर उल्लास।
पहले नौ दिन नवक मे लिया, एक दात अन्न एक दत्त पानी,
दूजे नवक में दो दो दत्त, यूं क्रम से तप सीना ठानी।
नवमे नवक में नौ नौ दत्ति, अन्न पानी भी ले उसवार,
इक्यासी दिन मे पूर्ण कीना, 'नव नवमिका' व्रत सुखकार।
इसी तरह सुकृष्णा ने फिर, चन्दना जी की आज्ञा धार,
उसके बाद फिर 'दश दशमिका', भिक्षु पडिमा की स्वीकार।
दस दिन के पहले दसक मे, अन्न पानी का एक एक दात,
दूजे दसक मे दो दो दात, यों किया निरन्तर तप दिन रात।
दसवें दसक में अन्न पानी की, दस दस दात करी स्वीकार
सौ दिन में पूर्ण कर दीना, 'दश दशमिका' व्रत उसवार।

इस प्रकार भिक्षु पडिमाये विधि से कर सूत्रानुसार,
अति दुर्बल हो गई सती जी, फुटकर तप भी किये अपार।
अर्ध मास और मासखमण तप कर किया आत्मा का उद्धार,
अन्त समय सथारा धर कर, सुकृष्णा गई मोक्ष मझार।

दोहाः—छट्ठे अध्ययन में सुनो, हे जम्बू! चितलाय।
श्रेणिक की ही भार्या, कोणिक की लघु माय॥
महा कृष्णा ने जब सुने, प्रभू वचन हितकार।
चन्दन बाला पास में, लीना संयम भार॥

तर्ज—राधेश्याम

फिर आज्ञा ले गुरूणी जी से, 'लघु सर्वतो भद्र' तप कीना,
जिसकी विधि मे सब से पहले, उपवास धार पारणा लीना।
पहली परिपाटी पारणो मे, नही विगय का वर्जित बतलाया,
पारणा करके बेला कीना, फिर पारणा कर तेला ठाया।
इस प्रकार चार ओर पाच किये, फिर तेला कर चौला उसवार,
पाच किये पारणा कीना, फिर उपवास और बेला धार।
फिर पाच किये उपवास किया, बेला तेला चौला सुखकार,
फिर बेला तेला चौला पचोला, और उपवास सुत्रानुसार।
अब चौला पचोला फिर कीना, उपवास औ बेला तेला पूर्ण
यू पहला परिपाटी करके, किया कई कर्मो का चूर्ण।
सौ दिन को यह परिपाटी, पच्चीस दिनो का कुल आहार,
पचहत्तर दिन की हुई तपस्या, महा कृष्णा सति के उसवार।
इसी तरह दूसरी परिपाटी, कीनी कर विगयो का त्याग
तीजी परिपाटी पर विगयो के, लेश मात्र पर नही अनुराग।

चोथी परीपाटी के पारणे, आयंबिल व्रत कीना उसवार,
इस प्रकार से लघु सर्वतो भद्र, तपस्या की हितकार।
एक वर्ष एक महिनो और, दस दिन में ये परिपाटी चार,
पूर्ण कीनी महासती ने, सूत्रों की विधि के अनुसार।
अन्त समय संथारा कीना, सब कर्मों का करके नाश,
सती महा कृष्णा जी ने फिर, मोक्ष पुरी में कीना वास।
इस सातवें अध्ययन में जम्बू ?, तू वीर कृष्णा का वर्णन जान,
श्रेणिक राजा की ही रानी, कोणिक की लघुमाता मान।
प्रभु वचन सुन दीक्षा लीनी, आई चन्दन बाला पास,
'महा सव तो भद्र' तपस्या की, आज्ञा ले धर उल्लास।
इन की विधि मे सबसे पहले, उपवास किया फिर पारणा धर,
विगयों का सेवन नही वर्जित, इस परिपाटी के अन्दर।
फिर बेला किया तेला चोला, फिर पचोला छ और सात किये,
प्रथम लता हुई पूर्ण यहा, फिर चोला पचोला धार लिये।
छ और सात किये उसने, फिर उपवास और बेला तेला,
लता दूसरी पूर्ण हुई अब, लता तीसरी को झेला।
सात किये उपवास किया, किया फिर बेला तेला चोला धर,
फिर पाच और छ कर के, दीनी लता तीसरी पूर्ण कर।
अब तेला चोला पचोला किया, फिर छ और सात कीना उपवास,
बेला कर यों चोथी लता भी पूरी की धरके विश्वास।
छ और सात, उपवास औ बेला, बेला चोला पचोला धार,
लता पांचवी पूर्ण कीनी, फिर बेला तेला उसवार।
चार किये फिर पाच किये, अब छ औ सात फिर कर उपवास,
छट्ठी लता को पूर्ण उसने, अब सातवी का वर्णन खास।
पाच किये छ सात किये, फिर उपवास औ बेला धर,
तेला करके चोला कीना, लता सातवी के अन्दर।

इस प्रकार इन सात लता की, परिपाटी हो गई एक खास,
उनपचास दिन हुये पारणे, तप सोलह दिन और छहमास।
इसकी दूसरी परिपाटी मे, सब विगयो का त्याग किया,
तीसरी परिपाटी के अन्दर, लेप मात्र नही विगय लिया।
चौथी परिपाटी के पारणे, आय बिल वृत कीने सुखकार,
इस प्रकार दो वर्ष आठ माह, बीस दिवस का है अधिकार।

सुत्र विधि से कर आराधन, अन्त समय सथारा लिया,
वीर कृष्णा ने कर्म काटकर, मोक्ष पुरी मे वास किया।
रामकृष्णा देवी का हाल है, आठवे अध्ययन के दरम्यान,
श्रेणिक राजा की ही रानी, कोणिक की लघु माता जान।
दीक्षा लेकर आज्ञा लीनी, चन्दन बाला सति के पास
'भद्रोत्तर प्रतिमा' तप को फिर शुरू किया है धर उल्लास।
इसकी विधि मेस बसे पहले, पचोला व्रत लीना धार,
विगयी का सेवन नही वर्जित, इसके पारणो मे उसवार।
फिर छह, सात औ आठ किये, फिर नौ कीने हैं एक ही साथ,
एक लता यो पूर्ण कीनी, दूजी लता मे कीने सात।
आठ, नौ, पाच औ छ कीने, अब तीसरी लता बताता हूँ,
नौ, पाच, छह, सात किये, फिर आठ का थोक गिनाता हू।
अब छः औ सात कर आठ किये, नौ, पाच, लता चौथी मझार,
आठ, नौ, पाच, छ, सात किये तब लता पाचवो हुई सुखकार।
यो एक परिपाटी पूर्ण हुई, छ मास बीस दिन के मँझार,
इस प्रकार पूर्ण की चारो, परिपाटी सूत्रानुसार।
दो वर्ष, दो मास, बीस दिन, कर चारो परिपाटी पूर्ण,
राम कृष्णा जी सिद्ध हुई फिर, सभी कर्म का करके चूर्ण

दोहाः—अब नवमा अध्ययन सुनो, हे जम्बू ! चितलाय।
पितृसेन कृष्णा सती, का यहां पर वर्णन आय ॥
कौणिक की लघुमात थी, श्रेणिक नृप की नार।
चन्दन बाला पास में, लीना संयम धार ॥

तर्ज—राधेश्याम

फिर आज्ञा ले गुरुणी जी का, 'मुक्तावली' तप कीना भारी,
उसकी विधि में ले सर्व प्रथम, उपवास किया उसने जारी।
फिर पारणा किना है उसने, सबही विगयों का सेवन कर,
बेला कर फिर किया पारणा, फिर उपवास किया है वर।
पारणा कर के तेला कीना, फिर वापिस कीना उपवास,
इस तरह बीच में कर उपवास, वो पन्द्रह तक पहुँची है खास।
फिर उपवास किया उसने, और अब सोलह का थोक किया,
उपवास कर फिर उपवास कीना, फिर पन्द्रह को पच्चक्ख लिया।
उपवास कर फिर चौदह किये, इस तरह बीच में कर उपवास,
सब से फिर नीचे उतरी वो, उपवास तक पहुँची है खास।
एक परिपाटी पूर्ण हुई थी, ग्यारह माह पन्द्रह दिन में,
चारों परिपाटी पूर्ण कीनी, तीन वर्ष दस महिने में।
सूत्र अनुसार कर तप को पूर्ण, और अन्त समय संथारा धार,
पितृसेन कृष्णा जी आर्या, कर्म काट गई मोक्ष मझार।
अब दसवां अध्ययन हे जम्बू ! महासेन कृष्णा का है जारी,
कौणिक राजा की लघु माता, श्रेणिक की रानी प्यारी।
प्रभु की वाणी सुन इसने भी, चन्दन बाला पे दीक्षा ली,
फिर आज्ञा लेकर 'वर्धमान आयम्बिल' नाम की तपस्या की।
उसकी विधि में सबसे पहले, आयम्बिल कर कीना उपवास,
इसके बाद में दो आयम्बिल कर फिर उपवास किया है खास।

तीन आयविल कर उपवास कीना, फिर आयविल कीने चार,
इस तरह बीच मे उपवास करते, सौ आयविल तक पहुँचा जार।
आयविल वर्धमान' तपस्या, इस तरह से पूर्ण कर लीनी,
चौदह वर्ष और तीन महिने, बीस दिनो मे सब कीनी।
पाच हजार पचास दिन आयबिल, उपवास के सौ दिन होते है,
इस तप मे नीचे नही आते, दिन दिन ऊचे ही चढते है।
तपस्या पूर्ण करने के बाद, चन्दनबाला सती पे आई,
वन्दन औ नमस्कार करके, महासेन कृष्णा जी हरषाई।
उपवास और तपस्या करके, आत्मा को निर्मल करती है
धम ध्यान मे लीन सती, सयम मे सदा विचरती है।
अत्यन्त दुर्बल हुई देह, पर अतिरिक्त तेज बढा भारी,
सोने के ताप ज्यू तप बल से, वो शोभित लगती अतिप्यारी।
एक दिन की पिछली रात्री मे, हृदय मे एक विचार बना,
स्कन्दक के समान ही यो सोचे, वह महासेन कृष्णा।
तपस्या से मेरा यह शरीर, यद्यपि कृश हो गया भारी,
फिर भी मुझ मे उत्पन और बल वीर्य पराक्रम है [illegible]री।
इसलिये सुर्योदय होते हो, चन्दन बाला सती पै जाऊ,
और उनकी आज्ञा लेकर के, मैं तो अब सथारा ठाऊ।
यो सोच सूर्योदय होते ही, चन्दन बाला पै चल आई,
वन्दन और नमस्कार करके, सथारे की आज्ञा चाई।
आज्ञा पा सथारा कीना, पर नही मरण को चाहती है,
धर्म ध्यान और शुक्ल ध्यान मे, सती लीन हो जाती है।
सामायिक, ग्यारह अग करके, औ सतरह वर्ष सयम पाला,
एक मास सलेखना की, आत्मा को उज्जवल कर डाला।
साठ भक्तो को अनशन से, छेदन कर अतिम श्वास मझार,
सम्पूर्ण कर्म को काट हो गइ, महासेन कृष्णा भव पार।

दस दसही अध्ययन मे दस ही , सतियों का वर्णन आया है ,
प्रथम काली आर्या ने सयम , आठ वर्ष का पाया है।
दूजो नौ, तीजी ने दस , इस तरह वढा क्रम से एक साल ,
अन्तिम सती महासेन कृष्णा ने, सतरह साल किया सयम पाल।
कोणिक की छोटी माता और, श्रेणिक राजा की थी सब नार ,
सयम ले सब करी तपस्या , सब ही पहुँचा मोक्ष मझार।

दोहा:-वर्त्तमान शासन चरण , धर्म आदि करतार।
श्रमण भगवत वीर जिन , पहुँचे मोक्ष मंझार ॥
ऐसा कहा प्रभू ने मुझे , तुम्हें कहा इस वार।
आठवें अ ग अंतगड्दशा , सूत्र का अधिकार ॥

—: तर्ज--राधेश्याम :—

इस अतगड दशा सूत्र में जम्बू ? श्रु त स्कन्ध एक, वर्ग है आठ ,
पर्यु षण के आठ दिनो मे , इसका ही होता है पाठ।
पहले वर्ग मे दस अध्ययन , दूजे मे आठ बतलाये हैं,
तीजे मे तेरह चौथे और पचम में , दस दस आये हैं।
छठ्ठे में सोलह और सातवें, मे तेरह अध्ययन जानो ,
वर्ग आठवे में दस है, इस तरह निव्वे अध्ययन मानो।
इस सूत्र में नगरादि वर्णन, सक्षेप मे ही बतलाया है,
बोधिलाभ और अन्त क्रिया का , सूक्ष्म वर्णन आया है।
ज्ञाता धर्म कथाङ्गसूत्र में, हैं इनका सारा विस्तार,
सुधर्मा स्वामी कहे हे जम्बू ? पूर्ण हुआ सारा अधिकार।

❁ दोहा ❁

विक्रम संवत दो हजार, ऊपर तेइस जान।
अनुवाद किया काव्य में, बुद्धि के परमान॥
शुरू किया अजमेर से, बम्बई हुआ मुकाम।
जेष्ठ कृष्ण की तीज को, पूर्ण किया तमाम॥
गुरू कृपा से लिख दिया, मन में धर हुल्लास।
महमकरण सुत जीतमल, चोपडा गुण का दास॥
भूल-चूक जो होय सो, गुणी दरसाजो जोय।
अधिका ओछा जे कह्या, मिच्छामि दुक्कड़म् मोय॥
शरण सदा वितराग की, मेटे भव दुःख भय।
सब मिल बोलो प्रेम से, जैन धर्म की जय॥

(ओ३म् शान्ति)

॥ श्री अन्तगडदशा सूत्र समाप्तम् ॥



रात और दिन का जो समय जा रहा है वह पुन लौट कर किमी तरह भी नही आ सकता ऐसा समझ कर जो धर्मिक जीवन विताते है, उनका जीवन सफल है। —भगवान म्हावीर

पर्व-पर्युषण

(तर्ज —जब तुम्हें चले परदेश, "रतन")

अब आये पर्वाधिराज, पर्युषण आज,
जैन जगमाई, घर घर मे खुशियाँ छाई ॥ टेर ॥

है भाग्य परम ए सौभागी, जिन चरणो मे अब लौ लागी,
परमाद परिग्रह, तजें सभी मिल भाई ॥ घर ॥ १ ॥

मास बारह फसे रहे माया मे, नही आये धर्म की छाया मे,
पर आठ दिवस रहे धर्म ध्यान के माई ॥ घर ॥ २ ॥

दीन दुखियो और सस्थाओ हित,जीव रक्षा और विधवावो हित,
जी भर दे दान सुयश की करे कमाई ॥ घर ॥ ३ ॥

हम ब्रह्मचर्य व्रत लेवेंगे, नित्य शील व्रत शुद्ध सेवेंगे,
प्रभू ने फरमाया शीयल सदा सुख दाई ॥ घर ॥ ४ ॥

करके तप कर्म हटावेगे, निज आत्म ज्योति जगावेंगे,
फिर जनम मरण दुख दूर करेंगे भाई ॥ घर ॥ ५ ॥

नित्य शुद्ध भावना भावेगे, आपस मे प्रेम बढावेगे,
नित्य शास्त्र सुनेंगे व्याख्यान मे आई ॥ घर ॥ ६ ॥

सत गुरु की सेवा बजावेंगे, नही पल भी व्यर्थ गमावेंगे,
ले लावा "जीत" मगल की वेला आई ॥ घर ॥ ७ ॥

चोरासी लाख जीवायोनी से क्षमायाचना की उसवार
चद्रप्रद्योतम से भी बोला क्षमायाचना बारम्बार ।
बन्दी बना रखा हैं मुझको राज्य लूट कर दिया पेमाल
क्षमा नही यह मजाक मेरी रहे जले पर मिर्ची डाल ।
तू स्वतन्त्र मैं बन्दी तेरा दुखा हृदय क्या देगा क्षम
पहले अपने सम कर मुझको फिर हे राजन मुझे खमा ।
दासी को मेरे सग वहदे मेरा राज्य दे वापिस सू प
सच्चे खमद खामणा मैं तो तब ही करू गा तुझ मे भूप ।
राजा उदायो पडा सोच मे जो नही मेटू इसका राप
लक्ष चोरासी मे यह भी है मेरे वृत मे लागे द.प ।
अपनो से तो क्षमा मागलू और द्वेषी से तजू न खार
समकित में बट्टा लग जावे डूब जाऊगा काला धार ।
सोहन गुलिक दासी जैसो मिली नारिया केई वार
नही मिलेगा धर्म हमेशा नही मिले समकित सुखकार
खड़ा आज तो मेरे सन्मुख कल इसका मिलना दुश्वार ।
फिर न मालुम किस भव माही यह मेरा उतरेगा भार
प्रात काल होते ही उदायी दासी को दीना परणाय
बन्धन से कर दीना मुक्त और राज्य दिया वापिस हरषाय ।
कनक कामनी दोनो त्यागो सच्ची क्षमा याचना ताय
सुखी हुआ जीवन दोनो का मिले गले से गला लगाय ।
मिले चन्दगी शीश झुकादो जाओ झट दस कोसा दौड
प्रतिकुल सन्मुख आजावे तो झट मु डो लेवो मोड ।
प्रतिकुल ने अनुकूल करवा की ही राह बताऊसा
शुद्ध हृदय से कहो आपतो बारम्बार खमाउसा ।
थारा सब पातक झड जासी और निर्मल हो जासी मन
ऐसा खमद खमावणा करम्यू 'जीत' वही दिन होसी धन ।